Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 18, Issue No. 5, August-2021, ISSN 2230-7540

बैगा महिलाओं के आभूषण प्रे्रम की एक झलक

कल्पना बिसेन[1]*, डॉ. गुलरेज खान[2]

[1] शोधार्थी, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, डोंगरिया, बालाघाट

[2] सहप्राध्यापक, समाजशास्त्र, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, डोंगरिया, बालाघाट (म.प्र.)

सार- बैगा छत्तीसगढ़ की एक विशेष पिछड़ी जनजाति है। छतीसगढ़ में उनकी जनसंख्या जनगणना 2011 में 89744 दशाई गई है। राज्य में बैगा जनजाति के लोग मुख्यतः कवर्धा और बिलासपुर जिले में पाये जाते हैं। मध्य प्रदेश के डिंडौरी, मंडला, जबलपुर, शहडोल जिले में इनकी मुख्य जनसंख्या निवासरत है।

बैगा जनजाति के उत्पति के संबंध में ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध नहीं है। रसेल, ग्रियर्सन आदि में इन्हें भूमिया, भूईया का एक अलग हुआ समूह माना जाता है। किवदंतियों के अनुसार ब्रहमा जी सृष्टि की रचना की तब दो व्यक्ति उत्पन्न किये। एक को ब्रहमा जी ने “नागर“ (हल) प्रदान किया। वह “नागर“ लेकर खेती करने लगा तथा गोंड कहलाया। दूसरे को ब्रहमाजी ने “टंगिया“ (कुल्हाड़ी) दिया। वह कुल्हाड़ी लेकर जंगल काटने चला गया, चूंकि उस समय वस्त्र नहीं था, अतः यह नंगा बैगा कहलाया। बैगा जनजाति के लोग इन्हीं को अपना पूर्वज मानते हैं। इस लेख में हम बेगा समुदाय की महिलाओं को आभूषण के प्रति प्रेम को दर्शया है

कीवर्ड- बैगा, आभूषण, महिलाओं

---------------------------------X---------------------------------

परिचय

भारतीय गहनों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि हमें देश के इतिहास में वापस ले जाती है, क्योंकि दोनों लगभग समान रूप से पुराने है । करीब 5000 वर्ष पहले की बात है, जब कुछ गहनों को सजाकर खुद को संवारे की जिज्ञासा लोगों में जगी । यात्रा की शुरूआत के बाद से गहनों का आकर्षण और इसे सुशोभित करके भारतीय महिलाओं की सुन्दरता कभी अलग नही हुई । भारत में शायद ही कोई ऐसी महिला हो , जिसे कभी गहनों से सजने का शौक न रहा हो । भारत में महिलाओं के जीवन में गहनों का महत्व उनके स्वयं के जीवन में गहनों का महत्व उनके स्वयं के जन्म से लेकर उनके बच्चों के जनम तक प्राप्त होने वाले गहनों के उपहारों से स्पष्ट होता है । कुछ गहने जैसे - मंगलसूत्र, नाक की लौंग, पैर की बिछिया को एक विवाहित भारतीय महिला के श्रृंगार का अभिन्न अंग मानती है । प्राचीन भारत में आए यात्रियों को यहॉ के रत्नों को देखकर बडा आश्चर्य हुआ । डोमिगो पेस (क्वउपदहवे चंमे) एक पुर्तगाली यात्री था जिसेन अपने काल क्रम अभिलेखन में भारत मे विजय नगर नाम के बारे में लिखा - “ वहॉ की एक सभा में भारतीय लोगों द्वारा पहने हए गहने देखकर वहॉ आए मेहमान बिल्कुल हैरत में पड़ गए । आदिवासी आभूषण पूरी तरह हाथ से बने होते हैं और अधिकतर नमूने उस क्षेत्र के फूलों और प्शुओं या किसी देवता से संबंधित प्रतीक को दर्शाते हैं । आदिवासी एकदम तन्हा, सुदूर और पिछडे साधनहीन क्षेत्रों में रहते हैं जैसे कि पहाड़ या जंगल । वहॉ शिक्षा और स्वास्थ्य की स्थिति बहुत पिछड़ी हुई है । दूसरी संस्कृति से इनका सम्पर्क नाम मात्र को ही जोता है । वहां बेतरतीब ढंग से पेर देश में बिखरे हुए है और उनमे आपस में बडी भिन्नता है । अफ्रिका के बाद भारत ऐसा देश है जहॉ आदिवासी समुदाय की इतनी घनी आबादी है 75 आदिवासी समुदाय भारत के विभिन्न क्षेत्रों में चिन्हित किए गए है ।

भारतीय संस्कृति और संजाति आभूषण

आभूषणों का पहली बार प्रयोग कब हुआ, यह तो नही पता लेकिन दक्षिण अफ्रिका की ब्लोमबोस (ठवसवउइवे) गुफाओं से मिले घोंघों से बने आभूषणों क अवशेष इसके प्रमाण है कि आभूषणों का अस्तित्व 100 हजार वर्षो से भी पहले मौजूद था । प्राचीन आभूषणों जानवरों के दॉत, हड्डियों, शीप, हाथी दॉत, नक्काशीदार पत्थर और लकडी से बने थे । धातु से बने जेवर 5000 ईसापूर्व पहले भी मौजूद थे । आधुनिक परिधान, फैशन और नकली जेवरों का प्रचलन 17वी शताब्दी में प्रांरभ हुआ ।

आदिवासी आभूषण मुख्य रूप से विशेष अवसरों पर पहने जाते थे, खूबसूरत होने के साथ साथ प्राचीन काल में ही गहनों को धर्म के सूत्र के रूप में भी जाना जाता रहा है । आदिवासी लोंग भारतीय भूमि के लिए एक धरोहर की तरह है । प्रत्येक जनजाति ने अपने विशिष्ट आभूषणों के अंदाज को अभी तक सुरक्षित रखा है । आदिवासियों द्वारा हड्डी, लकडी, मिट्टी, सीप और कच्ची धातु से आभूषण बनाए जाते थे, यह ना केवल डिजाईन में विशिष्ट होते थे बल्कि उनमें एक अलग तरह का ग्रामीण और जमीन से जुड़ा आकर्षण होता था । आदिवासी आभूषणें का स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्री से निर्माण होता है । जबकि सारे देशों में भारत वैविध्य पूर्ण आदिवासी संस्कृति से सम्पन्न देश रहा है, जिसने आधुनिकीकरण के दबाव के बावजूद अपनी परम्पराए और मूल्य आज भी सुरक्षित रखे हैं । आदिवासी गहनों मे मिट्टी का सौन्दर्य कायम है, दूसरी तरफ पारम्परिक आभूषणों के मुकाबले अलग ढंग से निर्मित और अपनी अलग-अलग पहचान वाले यह गहने बहुतों द्वारा सराहे जाते हैं । आदिवासी गहनों में सामाजिक और सांस्कृतिक परम्पराओं की संक्षिप्त झलक इनकी बडी खूबी है । पुराने समय में शरीर के अनेक हिस्सों को सजाने के लिए अलग अलग आभूषण होते थे ।

“ मेरे विचार से बैगा की विभिन्न उप जन जातियों के पहनावे और आभूषण में ये मुख्य अन्तर है ये मुख्य रूप से हिन्दू पर नही, बल्कि गोंड प्रभाव पर निर्भर करते हैं । ”

जनजातियों के आभूषण (विशेषकर बैगा महिलायें)

क्र	अंग	आभूषण
1	बाल	बालों को बांधने के लिए कभी-कभी रेशम के झेले का उपयोग या उनी फुंदरा का उपयोग ।
2	सिर	बहुत कम बैगा चॉदी की मांगचिरनी पहनते हैं ।
3	कान	खिनवा, तरकी, लरकी, खूंटी, लवांगफुल
4	नाक	परिहार करते हैं, नहीं पहनते ।
5	गला	सुतिया, सता, सुर्रा, दुलरी, तिलरी, हंसली, पुतरी, ठोलकी, ताबीज, सिक्के जो राजा के सिर को पीटते ,जो स्तनो तक लटकते हैं ब-कंठी - काले मोतियों की कंठी है, लाल पीले रंग की कंठी
6	हाथ	बाजूबंद , नागमोरी, कॉच की चूडियॉ
7	कमर	करधन (चॉदी) नीले व पीले रंग का लटकनिया
8	पेैर	बिच्छवा, पेरी, पायल, साल्टी, लच्छा, रतोड़ा,
9	अंगूली	मुंदरी - हाथों में पहनने वाली अंगूठी की तरह है ।

बैगा पुरूषो के आभूषण

आभूषण के लिए पुरूष लोहे या चांदी के कंगन पहनते हैं, प्रत्येक कलाई पर एक जिसे चीरा कहा जाता है, दोनों हाथों की तीसरी और छोटी उंगलियों पर व पीतल, एल्युमिनियम, चांदी, ताम्बे की मुंदरी (अंगूठी) पहन सकते हैं या अपने कानों के उपरी हिस्से में बारी और बीच मे एक छेद में बाला पहनते हैं ओर लोब के माध्यम से लार्की, बारी, नीले और सफेद मोतियों से बनी होती है । जो महिन तार के एक घेरे पर टंगी होती है । बाला ज्यादा वही है जो केवल बडा है लुरकी सोने या चाॅदी की एक छोटी अंगूठी है । वृद्ध बैगा पुरूष ज्यादातर कुछ आभूषण नही पहनते हैं। त्योहारों के लिए तैयार होते हैं । एक बैगा पुरूष गुलाब जिसने बताया कि पुरूष केवल लोहे की साकरी या जंजीर पहनते हैं, जिसमें केवल उनके देवता निवास करते हैं । अन्य दूसरे बैगा पूरूष धुरपद बैगा जो केवल लाल और काले मोतियो का हार पहनते हैं, नृत्यों के समय पुरूष पगडी में बंधी मोर के पंखों की कलगी और गले मे मोतियों का हार पहनते हैं । अपने पैरों में पायल, पाजना, छोटी घंटियों वाली पायल लगाते हैं। कभी कभी वे चित, पगड़ी की तरह सिर के चारों ओर बंधा एक लाल कपडा और झंगा नामक एक विशेष (कमीज) पहनते हैं ।

भूमिया महिलाए धार पहनती है, लेकिन इसकी विशिष्ट जंजीरों के बिना, कान के लोब में जिस छेद में पोला भी होता है, लकडी का एक मोटा गोल तुकड़ा बीच में एक छेद होता है जो अन्य

आभूषणें के न होने पर छिद्र को खुला रखता है । तुम्बा लौकी (एक प्रकार की सब्जी का फल) के पतले स्टाक या मक्के के डंठल से तर्की एक समान आभूषण हैं, लेकिन इसका सामना लाख से किया जाता है । बिलासपुर के बैगा कभी-कभी अपने कानों में पीतल की छतरी के आधार किना पहनते हैं । इन गहनों को पहनने के लिए कान के छेद को बहुत धीरे-धीरे बडा किया जाता है । पहले एक बिट घास डाली जाती है फिर दूसरी फिर दूसरी/तीसरी इस तरह से छोटी गठरी तीन महिने से एक साल तक बढती रह सकती है । बैगा पुरूष नाक के आभूषण नही पहनते हैं । यह एक महत्वपूर्ण नियम है जो उन्हें अन्य जनजातियों से अलग करता है और यह सुझाव कि बैगा लड़की अपनी नाक छिदवा सकती है, हमेशा एक बडा मजाक माना जाता है ।

चूड़ा - इसे पैरों में पहना जाता है ये चैड़े छल्ले वाली पीतल की भारी पायल है जोडी अक्सर गीतों से मनाई जाती है अलंकृत पीतल या चॉदी की पायल जो एड़ी पर फिसल जाती है उनके अंदर घुंघज या घातु के छोटे टुकड़े होते हैं जो उन्हें झकझोर देते हैं ।

पैर की अंगुलिया - उंगलियों पर छुटकी और बडे पैर के अंगूठे (दाए) छुटका पहना जाता है।

भरोतिया - केवल पीतल की चूडियॉं पहनना पसंद करती हैं उनमे से बहुत सी बैगा महिलाए अपनी बाहों तक चूडियॉं पहना जाता है जिसे दारकना कहा जाता है ।

नरोतिया - तारकी पहनते हैं लेकिन बहुत कम ही पीतल की चूडियॉं पहनते हैं वे रंगीन कांच पसंद करते हैं ।

मुरिया और बिंझवार - साधारण कॉच या एल्युमिनियम की चूड़िया पहनते हैं । कठ-मैना - अलग दिखने के लिए काॅच की चूड़ियों के साथ पीतल की चूडियॉं पहनते हैं ।

गहनों का महत्व

भारतीय संस्कृति में नारी के गहनों का विशेष महत्व बताया गया है, इसके पीछे ना सिर्फ धार्मिक महत्व शामिल है ,बल्कि वैज्ञानिक महत्व भी शामिल है । चलिए उसे जानने का प्रयत्न करते हैं कि आखिर क्यों नारी गहनों से इतना लगाव रखती हैं “ सजना है, मुझे सजना के लिए ” जब भी हम यह गीत सुनते हैं, इससे हम सहज ही अंदाजा लगा सकते हैं कि नारी अपने प्रेम को प्रदर्शित करने के लिए भी गहने पहनती है ।

दुनिया में हर जगह नारियों ने पर्याप्त मात्रा में गहने पहने हैं , चाहे वह हार, कंगन, या झुमके के बारे में हो, गहने बेहद लोकप्रिय है , तो कई नारियॉं दैनिक आधार पर गहने पहनने का विकल्प चुनती है ।

तथ्य यह है कि गहने हमेंशा मानव संस्कृतियों का एक महत्वपूर्ण हिस्सा रहे हैं ।

नारियों के जीवन में गहनों का महत्व को इस तथ्य से समझा जा सकता है कि नारियों को एक उम्र के बाद से गहने पसंद होते हैं, इसलिए यह कुछ ऐसा है जो उन्हें विरासत में मिला है । यह गहने के बिना ऐसा है जैसे स्त्री के जीवन में कुछ अधूरापन सा है ।

सभी विशेष अवसरों के लिए एक महत्वपूर्ण गहने ही है एक महिला के जीवन में महत्व रखते हैं । जैसे- शादी, सालगिरह, जन्म दिन की पार्टी, पहले बच्चे का जन्मदिन, कुछ स्थानों पर नारियो ंको अपने पति से गहने प्राप्त करने के लिए विशेष घटना का चिन्हित करना होता है । इसलिए अगर नारियाॅ ऐसे विशेष अवसरों पर गहने नही पहनती है, तो यह कम से कम अजीब होगा ।

गहने नारियों को एक भव्य स्त्री रूप देते हैं और उनकी अधिक आत्म विश्वास, शैली और सुन्दरता को सामने लाते हैं ।

गहने सबसे अच्छे और मंहगे उपहारों में से एक हैं, यू तो शादी के बाद पति के लिए सजना सभी नारियों को पसंद होता है । हिन्दु विवाह मे तो सोलह श्रृंगार की चीजें ही निर्धारित कर दी गई है उन्हें पहनना शुभ माना जाता है । ऋगवेद में भी सौभाग्य के लिए किए जा रहे सोलर श्रृंगारों के बारे में बताया गया है ।

नारी द्वारा पहने जाने वाले गहनों का वैज्ञानिक महत्व -
जैसा कि भारतीय संस्कृति के रीति रिवाजों में सुहागिन नारियों के सोलह श्रृंगार को काफी महत्व दिया जाता है जिसे शादी के बाद हर लड़की पूरे मन से मरते दम तक श्रृद्धा के साथ निभाती है । आईए हम जानते हैं उन्ही सोलह श्रृंगारों को इन

www.ignited.in

नारियों द्वारा पहने जाने वाले कुछ गहनों के महत्व और वैज्ञानिक तथ्यों के बारे में:-

1- किसी भी शादीशुदा नारी के लिए उसका मंगलसूत्र सबसे अहम माना जाता है और साथ ही ये काफी अनमोल गहना होता है । मंगलसूत्र को उसके सुहाग की सबसे बडी निशानी मानी जाती है और सुहागिन नारियों के इस अनमोल गहने के पीछे जो वैज्ञानिक तथ्य शामिल है वो यह बताता है कि अपने गले में डालने से शरीर का ब्लडप्रेशर कट्रोल में रहता है और दिल से संबंधित भी हर बिमारी दूर रहती है ।

2- नारियों के सोलह श्रृंगार में से बिछिया भी एक अहम श्रृंगार माना गया है । जो कि शरीर में होने वाली कई बिमारियों को दूर करने में काफी सहायक है और इसे पहनने से नर्वस सिस्टम और रिप्रोडक्टिव सिस्टम दोनों ही बिल्कुल दूरूस्त रहते हैं । बिछिया पहनने के एक लाभ यह भी है कि ये ब्लड प्रेशर को नियंत्रित रख मासिक धर्म से जुड़ी समस्याओं से भी छुटकारा दिलाता है ।

3- कान की बाली -ईयरिंग या कान की बालियॉ शादीशुदा नारियॉ भी पहनती हैं और कुंवारी लडकिया भी, लेकिन यह बात गौर करने वाली है कि कान में पहनने वाली बाली हमारे शरीर के लिए फायदेमंद होती है। कान में पहनने वाली बाली या ईयरिंग हमारे शरीर में एक्यूपंचर का काम करती है । साथ ही यह महिलाओं के मासिक धर्म से जुड़ी समस्याओं से भी छुटकारा दिलाती है और सोचने समझने की शक्ति को बढावा देती है ।

निष्कर्ष

हम निष्कर्षतः कह सकते हैं कि बैगा एक ऐसी जनजाति हैं जिसे ये अपेक्षा नही की जा सकती कि यह जनजाति आभूषणों के लिए कभी भी व्यक्तिगत अलंकरण की एक अलग परम्परा नही रही है । देखा जाए तो बैगा जनजाति पर गोंड और हिन्दु सभ्यता के सम्पर्क में आने के बाद आभूषणों के प्रति इनका रूझान हो पाया है । जिसमें कि हम देख रहे हैं कि समय सके साथ साथ जैसे जैसे आधुनिक संस्कृति का (पश्चिमी सभ्यता) प्रभाव बढ रहा है वैसे ही इसका प्रभाव बैगा जनजाति के आभूषणों मे खाई देने लगा है । अब वे हाट बाजार मे मिलने वाले प्लास्टिक, कॉच, और अन्य धातुओं के और कहीं कही तो समृद्ध बैगा महिलायें सोने व चांदी के आभूषण भी पहनने लगी है जो उनकी संस्कृति में होने वाले परिवर्तन की झलक दिखाता है ।

भूमिका

भारत विभिन्न संस्कृतियों का पालना रहा है, विविधता भारत देश की पहचान रही है, भारत में पायी जाने वाली विविधताआं के अनुरूप सामाजिक-सांस्कृतिक विषमताओं का विकास होता रहा है । भारत के कुछ क्षेत्र ऐसे हैं ज्रिन्हें पूर्ण विकसित क्षेत्र कहा जा सकता है, क्योंकि वे क्षेत्र आधुनिक आवश्यकताओं के आधार पर पूर्णतः विकसित हो चुके हैं । किन्तु भारत का एक विभिन्न पहलु हैं, यहॉ आज भी ऐसे कइ्र क्षेत्र जिन्हें पूर्णतः अविकसित क्षेत्र की श्रेणी में समाहित किया जाता है, क्योंकि इन अविकसित क्षेत्र में निवास करने वाले लोगों की जीवन शैली, भाषा, बोली, पहनावा, खान-पान, शिक्षा, स्वास्थ्य, रीति-रिवाज, मान्यतायें, आचार-विचार सभी में भिन्नतायें मौजूद पायी जाती है। इन विविधताओं के बीच देश में निवास करने वाली जनसंख्या को शासकीय स्तर पर जनगणना विभाग के द्वारा तीन भागों में वर्गीकृत किया गया है 1- सामान्य , 2- अनुसूचित जाति एवं 3- अनुसूचित जनजाति के संवर्गो में वगीकृत किया गया है । इन तीन संवर्गो में सामान्य वर्ग के लोग सबसे अधिक विकसित एवं जनजातीय समूह के लोग जो पहॅुच में दुरूह, भौतिक एवं जलवायु की दृष्टि से मानव निवास के लिए अनुपयुक्त स्थलों में अपने सांस्कृतिक विरासत को जीवन्त करते हुए सभ्य दुनिया से अलग निवासरत हैं,शिक्षा साहित अन्य सभी क्षेत्रों में सबसे अधिक पिछड़े हुए हैं ।

स्वतंतत्रा प्राप्ति के बाद देश के नवनिर्माताओं एवं चिन्तकों ने शिक्ष के प्रचार-प्रसार पर विशेष बल दिया । इस का प्रभाव शहरी एवं दुरूह गम्यता वाले क्षेत्रों में निवा करने वाले आदिम जन इन सामान्य योजनाओं का विशेष लाभ न उठा सके । समीक्षाओं के पश्चात् जात दुआ की आदिवासी जो भारत के कुल जनसंख्या के 23 प्रतिशत भाग है, शिक्षा की दृष्टि से अभी भी काफी पिछड़े हुए हैं । जिसके कारण विकास संबंधी अन्य योजनाए सफलीभूत नही हो पा रही है । अतः इनके शिक्षा के विकास हेतु विभिन्न कार्य योजनाओं को प्रारंभ किया गया ।

अध्ययन क्षेत्र बालाधाट जिला मध्यप्रदेश के दक्षिणी अंचल में स्थित एक जनजाति बाहुल्य जनसंख्या वाला भू-भाग है ।

अध्ययन क्षेत्र में कुल 16 प्रकार की अनुसूचित जनजातियाॅं निवास करती है, जिनमें प्रमुख गोंड जनताति अन्य जनजातियों की तुलना में शिक्षा के क्षेत्र में अधिक विकसित है, जबकि बैगा जनजाति सबसे अधिक पिछड़ी हैं । शिक्षा के क्षेत्र में शासकीय प्रयासों के बावजूद बैगा जनजाति की समग्र साक्षरता 41.37 प्रतिशत है । कुल साक्षर व्यक्तियों में पुरूष साक्षरता 55.36 प्रतिशत एवं महिला साक्षरता 44.63 प्रतिशत है। तकनीकी एवं व्यावसासिक शिक्षा के क्षेत्र में तो अभी भी इस जनजाति का यह वर्ग अत्याधिक पिछडा हुआ है । जिसके कारण विकास संबंधी लक्ष्यों की आपूर्ति नही हो पा रही है ।

समस्यायें

अध्ययन क्षे मछूरदा में बैगा, गोंड जनजाति निवास करती है । इन जनजातियों के विकास के स्परूप में तुलनात्मक अंतर पाया जाता है गोंड जनजाति हो कि परियोजना क्षेत्र के भू-स्वामी भी है, तथा अपने आपको इस क्षेत्र के शासक के रूप में परिचय कराते हैं, आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक दृष्टि से सबसे अधिक विकसित है । जबकि बैगा अत्याधिक पिछड़ी हुई है । इस जनजाति की प्रमुख समस्यो वर्तमान समय में निम्नानुसार है:-

1- आर्थिक दृष्टि से बैगा जनजाति समूह विपन्न है ।
2- अपने खेत्र के संसाधनों का सही ढंग से दोहन नही कर पा रहे हैं ।
3- आर्थिक क्रिया में वनोपज एकत्रित करना, पशुपालन, कृषि एवं खनन प्रमुख हैं। जिनमें से कृषि एवं पशुपालन में नवाचार का उपयोग न्यून है।
4- बैगा प्रधान ग्रामों मे आवागमन के साधनों की कमी एंव विपणन केन्द्रों का अविकसित स्वरूप है ।
5- सामाजिक दृष्टि से बैगा जनजाति अन्य वर्गो से दूरी बनाये हुये हैं ।
6- ऋणग्रस्तता, शोषण, गरीबी, भुखमरी, स्वास्थ्य, शिक्षा की समस्यायें प्रमुख है ।
7- परसंकृति प्रभाव, के कारण नाश शराब खोरी जैसी समस्याओं में अभिवृद्धि हो रही है ।
8- आरक्षण के बावजूद अभी तक बैगा जनजातियों में राजनैतिक चेतना का अभाव दृष्टि गोचर होता है ।

उपयुक्त सभी समस्याए शैक्षणिक समस्याओं से जुड़ी हुई है । मूल रूप मे बैगा जनजाति मे साक्षरता की कमी को दूर कर इनके सामग्र विकास को सुनिश्चित किया जा सकता है । प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य निम्नानुसार है:-

पूर्व में किये गये कार्य

घने वनो एवं दुरूह क्षेत्रों में निवास करने वाली बैगा जनजाति सभ्य मानव को वर्तमान समय में विशेष रूप से आकर्षित कर रहे हैं । जिसके कारण अनेकानेक विद्वान उनके जीवन के विभिन्न पहलुओं के अध्यन की ओर आकर्षित हुए हैं । भारत में जनजातियों से संबधित जानकारी रामायण एवं महाभारत काल से चली आ रही है । जिसमें शवर, भिल्ल, कोल, किरात जैसे जातिसूचक संबोधन से स्पष्ट होता है । किन्तु इनसे संबंधित अध्ययन वर्तमान काल की देन है ।

जनजातियों से संबंधित अध्ययन का प्रारंभ नृतत्व विज्ञान से प्रारंभ होकर समाज शास्त्र भूगोल एवे राजनीति शास्त्र जैसे विषयों में समाहित हो गया है। भूगोल में जनजातियों का अध्ययन प्रमुखतः मानव भूगोल एवं प्रादेशित भूगोल में किया गया । यद्यपि इस क्षेत्र मे हए अध्ययन को प्र्याप्त नही कहा जा सकता।

जनजातियों से संबधित अध्ययन का प्रारंभ जनगणना में 1881 से प्रारंभ हो गया था, किन्तु जात की विभिन्न विधाओं में इसका अध्ययन 1924 के बाद प्रांरभ होता है । स्मिथ महोदय 'आओ' नागा पर अपना व्यवस्थित अध्ययन किया स्मिथ के बाद हट्टन महोदय (1938) जनजातियो के नृतात्विक अध्ययन प्रस्तुत किये । जनजातियों के सव्यवस्थित अध्ययन का शुभारंभ एल्विन महोदय (1939) ' द बैगा'' से प्रांरभ होता है । जिसमे उन्होने मध्य भारत में निवास करने वाली बैगा जनजाति के सामाजिक संरचना का अध्ययन प्रस्तुत किया । इसी प्रकार के अध्ययन भारत के विभिन्न क्षेत्रों में निवास करने वाली जनजातियों के किये गये, जिनमें प्रमुख रूप से संुदरम का नीलगिरी के टेडा है। इस काल के अन्य अध्ययनों में जी.एस. धुर्रे (1948) , ए . एल. क्रोवर (1948) गिलिन एझ गिलिन (1950) आदि प्रमुख है ।

1950 तक जनजातिय अध्ययन एक सुव्यवस्थित विज्ञान के रूप मे स्थापित हो चुका था । 1950 से 70 के दशक में भिन्न-भिन्न जनजातियों के आर्थिक, सामाजिक तथ्यों के विशेषीकृत

www.ignited.in

अध्ययन पर जोर दिया गया । इस अवधि के उल्लेखनीय अध्येताओं मे डी एन मजूमदार (1958), जी पी मडोक (1961), गुजरात विद्यापीठ (1968) मुख्य है । इसप्रकार 1970 के दशक के बाद प्रारंभ होता है । इस काल के प्रमुख अध्योताओं, में एल पी विद्यार्थी (1977), श्यामा प्रसाद दुबे (1977) सिन्हा (1980) प्रमुख रहे । अन्य विद्यानों में रैना (1971) ने विहार जनजातियों के ग्रामीण बाजार एवं सिंह (1971) ने नागा जाति की समस्या, वृहष्ठेश्वर शर्मा(1971) म0प्र0 में कृषि तरीको का अध्ययन, अराफाक (1973), म0प्र0 के जनजातियों का जनाकिकीय अध्ययन किया । जनजातिय भूगोल के विषयवस्तु को आगे बढाते हुए प्रसाद (1980) रॉची में जनजाति की आवासीय समीक्षा की । इस काल के विद्वानों मे प्रमुख अरोरा, प्रताप, देशपाण्डे, जोशी । (1984) दत्रा, शिव कुमार तिवारी (जबलपुर), एस के शर्मा (सागर विश्व विद्यालय), सी.पी.तिवारी (रीवा), विजय कुमार तिवारी (बिलासपुर) आदि विद्ववान जनजातिय भूगोल के विकास में उल्लेखनीय कार्य किये है ।

वर्तमान में भारत क विभिन्न विश्वविद्यालय में जनजातिय शोध एंव अध्ययन किया जा रहा है । मध्यप्रदेश के अनुपपुर जिला के अमरकंटक स्थल पर कए जनजातिय विश्वविद्यालय की स्थापना की गई है । जिसमें जनजातियों के अध्ययन में विकास की पर्याप्त संभवनायें दृष्टिगोचर हो रही है ।

अन्य राष्ट्रो की भांति भारतीय विश्वविद्यालय में पर्यावरण संबधी अध्यन एंव अनुसंधान भूगोल के अन्तर्गत पर्यावरणीय तथ्यों का विस्तृत अध्ययन किया गया । परिस्थितिकी तंत्र जिसके अन्तर्गत जनजातियों के कृषि उद्योग, समाज, संस्कृति आदि को समाहित करते हुए व्यापक स्तर पर अध्ययन हुये ।

ब्लम फील्ड (1778)

हेमर्व एद (1927)

वेरियर एल्विन (1939)

नायक टी बी (1956)

सावित्री विव्थर (1960)

प्रदीप कुमार बोस (1981)

सुजाता के (1988)

जितेन्द्र निमजे (2004)

गोयल (2005)

डॉ0 गुप्ता एवं डेविड डॉ एलका (मार्च 2018)

शोध संकल्पना:- प्रस्तुत शोधकार्य निम्नांकित संकल्पनाओं पर आधारित है:-

1- बैगाओं के विकास के लिए सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाए एक आवश्यक उपकरण है ।

2- बैगाओं के व्यक्तित्व के विकास के संबंध में सरकारी योजनाओं का प्रभाव।

3- विभिन्न योजनाओं के माध्यम से बैगा लोगों के जीवनस्तर व उनकी संस्कृति में आया परिवर्तन

4- विभिन्न योजनाओं के माध्यम से बैगा महिलाओं व बैगा किशोरी बालिकाओं के जीवन में एवं संस्कृति में सकारात्मक परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहा है ।

5- योजनाओं के प्रभाव के फलस्वरूप बैगाओं के व्यवहार व महत्वाकांक्षाए उत्पन्न होने लगी है ।

शोध विधि तंत्र

किसी विषय के अध्ययन एवं शोध कार्य में प्रयुक्त विभिन्न विथिया उसके विषय वस्तु को सुनिश्चित कर वैज्ञानिक विशलेषण में सहायता करती है । जिससे उसकी स्पष्टता प्रभावकता एंव रोचकता में वृद्धि होती है । साथ ही इन विधियों के प्रयोग से शोधकताओं, नियोजकों एंव अध्येताओं के कार्य सुगम होते हैं । अतः सरलता एवं वैज्ञानिक विश्लेषण हेतु शोध की निम्नांकित विधियों के अन्वेषक द्वारा अपनाया गया है ।

1- **क्षेत्रीय सर्वेक्षण:-** पृथ्वी पर पाये जाने वाले विभिन्न तथ्यों की जानकारी क्षेत्रीय सर्वेक्षण के बिना पूरी नही हो सकती । अतः विषय से संबंधित विभिन्न जानकारिया यथा - जनजातिय पर्यावरण की अवस्थिति, समीपवर्ती क्षेत्रों का धरातल, अन्य प्राकृतिक स्वरूप, बैगा जनजाति का बसाव एवं

उनका रहन-सहन, जलवायु तथा भौतिक पर्यावरण में परिवर्तन की स्थिति आदि की जानकारी के लिए क्षेत्र का सर्वेक्षण किया गया है । क्षेत्रीय सर्वेक्षण का कार्य दो विधियों द्वारा पूरा किया गया -

अ- अवलोकन

ब- व्यक्तिगत साक्षात्कार

अ- अवलोकन - प्रत्यक्ष रूप से प्राकृतिक तथैं, मानव एवं उसके द्वारा विकसित भू- दृश्यों का अध्यन अवलोकन द्वारा संभव हो पाय है ।

ब- व्यक्तिगत साक्षात्कार - अध्यय क्षेत्र की यात्रा के समय प्रश्नावली प्रारूप अनुसार बैगा जनजाति की स्थिति के बारे में पूछताछ द्वारा जानकारी एक की गई है । ग्रामीण बैगा व्यक्तियों से उनकी समस्यायें, उनके रहन-सहन पर सांस्कृतिक प्रभाव तथा उनकी सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर परिवर्तन के स्वरूप की जानकारी व्यक्तिगत साक्षात्कार द्वारा ही सुलभ हो पायी है । व्यक्तिगत साक्षात्कार द्वारा बैगाओं के लिए चलाई जा रही विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं के द्वारा लाभांन्वित होने की जानकारी भी प्राप्त हो पाई जानकारी में पाया गया कि योजनाओं के माध्यम से ना केवल बेैगाओं की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है, बल्कि सामाजिक स्थिति मे भी बैगा जनजाति में सुधर देखा जा सकता है । इस प्रकार से योजनाओं के माध्यम से लाभान्वित होने से बैगाओं की संस्कृति में भी परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगा ।

2- समंकों का एकत्रीकरण, **साणीयन एंव विश्लेषण:-** क्षेत्रीय सर्वेक्षण से विभिन्न शासकीय, अर्धशासकीय कार्यालयों, स्थानीय संस्थाओं, संगठनों के आंकडों को एकत्रित किया गया है । जनजातीय पर्यावरण के तत्वों की उपलब्धता से संबंधित अंकड़े जिनमे - जल, वन, खनिज, भूमि, संसधनों की उपलब्धता, उनकी वार्षिक खपत, उनमें हो रहे वार्षिक ह्रस की स्थिति परिणाम स्वरूप बैगा जनजाति के जीवन स्तर आदि की जानकारी के लिए चुने हुए संबंधित कार्यालयों द्वारा उपलब्ध हो पायी है । उपर्युक्त विधियों एवं क्षेत्रों द्वारा संग्रहित आंकडों को सारणीबद्ध कर सांख्यिकीय विधियों द्वारा विश्लेशण-

बैगाओं का इतिहास - विश्व स्तर

भारत - मध्यध्यप्रदेश - बालाघाट

अध्याय प्रथम

भारत की जनजातियॅा - एक परिचय

1- परिचय
2- जनजाति की परिभाषा
3- भारत की जनजातियों का वर्गीकरण -
   1- भौगोलिक वर्गीकरण
   2- भाषागत वर्गीकरण

मध्यप्रदेश की जनजातियॅा -

इस पोर्टल का विकास भारत विकास प्रवेशद्वार - एक राष्ट्रीय पहल के एक भाग के रूप मे सामाजिक विकास के कार्यक्षेत्रों की सुचनाएँ जानकारिया और सूचना और प्रौद्योगिकी पर आधारित उत्पाद व सेवायं देने के लिए लिया गया है । भारत विकास प्रवेशद्वार भारत सरकार के इलेक्ट्रानिक और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय की एक पहल ओर प्रगत संगणन विकास केन्द्र (सी. डैक) हैदराबाद के द्वार कार्यन्वित है ।

मध्यप्रदेश की प्रमुख जनजातियॅा

2011 की जनगणना अनुसार मध्यप्रदेश में अनुसूचित जाति की जनसंख्या 113,42,320 है जो प्रदेर्श की कुल जनसंख्या का 15.6 प्रतिशत है व अनुसूचितजनजाति की जनंसख्या 1,53,16,784 है जो राज्य की कुल जनसंख्या का 21.1 प्रतिशत है । मध्यप्रदेश की प्रमुख जनजातियॅा भील, गोंड, बैगा, कोल, भारिया, सहरिया, सउद, पनिका, अगरिय, खैरवार, आदि है ।

गोंड जनजाति - गोंड जनजाति मध्यप्रदेश व भारत की सबसे बडा जनजातिय समूह है, गोंड जनजाति के लोग मध्यप्रदेश के लगभ सभी जिलों में निवास करते हैं। गोंड जनजाति की उत्पत्ति प्राक द्रविड प्रजाति से मानी जाती है । गोंड जनजाति के लोगों का रंग काला, सर गोल, होठ मोटे व नाक बडी होती है और स्त्रीयॅा पुरूषो की तुलना में कम लंबी होती है । गोंड जनजाति में बहन की लडकी व भाई के लडके के मध्य विवाह का प्रचलन है जिसे “ दूध लौटावा” कहा जाता है । अगरिया ,

www.ignited.in

परधन, सोहहास और नगारची गोड जनजाति की उपजातियॉ है ।

भील जनजाति - भील जनजाति मध्यप्रदेश की दूसरी सबसे बड़ी व भारत की तीसरी सबसे बडी जनजाति है, भील जनजाति के लोग मध्यप्रदेश के झाबुआ, धार और खरगौन जिले में निवास करते हैं। भील जनजाति प्रोटो आॅस्टेªलापड प्रजाति से संबंधित हैं । इनका कद मध्यम छोटा होता है । भील जनजाति के पारंपरिक मकानों में खिडकिया नही होती है, जिन्हें यहॉ ‘‘क’’ कहा जाता है बरेला, भिलाला, परलिया आदि भील जनजाति की उपजातियॉ है ।

कोल जनजाति- कोल जनजाति मध्यप्रदेश के रीवा और जबलपुर जिलों में निवास करती है । इस जनजाति को मुडारी और फोलेरियन नामो से भी जाना जाता है। रोहिया और रोठेल इनकी प्रमुख उपजातियॉ है । कोल जनजाति हिन्दी रीतिरिवाजों को मानती है इनके प्रमुख देवी देवता, इल्हा देव, बैरम, बडे देव आदि है ।

भारिया जनजाति - भारिया जनजाति के लोग मध्यप्रदेश के जबलपुर और छिंदवाडा जिलों में निवास करते हैं, पोडों, भूमिया और भूईहार इनकी प्रमुख उपजातियॉ है । भारिया जनजाति के लोग हिन्दे धर्म को मानते हैं भीमसेन इनके प्रमुख देवता हैं ।

बैगा जनजाति - बैगा जनजाति के लोग मध्यप्रदेश के बालाधाट, मण्डला, और शहडोल जिलों में निवास करते हैं । नारोजिया, भरोतिया, मैना, बिझवार, नाहर, काठ आदि इनकी प्रमुख उपजातियॉ है बैगा जनजाति के लागों दवारा विशेष अवसरों पर सुअरों की बलि दी जाती है । बैगा जाति के अधिकांश लोग अपने सर के बाल नही काटते है।

कोरकू जनजाति - कोरकू जनजाति मध्यप्रदेश के खण्डवा, बैतुल, होशंगाबाद और छिंदवाडा जिलो में निवास करती है मोवासी, रूमा, बपारी, बोडोया, नहाला आदि इनकी प्रमुख उप जातियॉ है ।

कोरकू जनजाति मुख्यतः कृषि पर निर्भर रही है कोरकू जनजाति में जिन लोगों के पास अपनी भूमि होती है उन्हें राजकोरकू और अन्य को पोधरिय कोरकू कहा जाता है । कोरके जनजाति भी हिन्दू धर्म को मानती है।

मध्यप्रदेश की प्रमुख जनजातियॉ व उनसे संबंधित जिले -

भील - धार, खण्डवा, झाबुआ

गोंड - प्रदेश के सभी जिलो में ।

कोरकू - खण्डवा, बैतुल, होशंगाबाद और छिंदवाडा

कोल - रीवा और जबलपुर

भारिया - जबलपुर और छिंदवाडा

बैगा - बालघाट, मण्डला, और शहडोल

सहरिया - मुरैना, शिवपुरी और गुना

अगरिया-शहडोल, मण्डला, सीधी,

सउर - पन्ना, छतरपुर, सागर, दमोह, और टीकमगढ

परधान - सिवनी, छिंदवाडा, बैतूल, बालाघाट

खैरवार- सीधी, छतरपुर, शहडोल, और पन्ना

4- मानचित्र एवं आरेख - अध्ययन की सरलता बोधगम्यता एंव पुष्टि के लिए मानचित्रों एंव आरेखों को उपयुक्त स्थलों पर समाविष्ट किया गया है ।

5- छायाचित्र - बैगा जनजाति के प्रमाणित अध्ययन के लिए अध्ययन क्षेत्र (मछुरदा) मे निवास करेन वाली बैगा जनजातियों से संबंधित तथ्यो को प्रकट करने के लिए बहुत से बैगा जनजातियों के जीवन चक्र से संबधित जैसे - बैगाओं के घर आभूषण, कलाकृतियों व उनके दैनिक जीवन से संबंधित छायाचित्र लिये गये है, इन छायाचित्रों में जनजातियों के जन जीवन, अर्थव्यवस्था, कृषि, पशुपालन, बैगा महिलाओं का दैनिक काय्रकालप, बैगाओं के जीवन विभिन्न सरकारी योजनाओं से लाभान्वित व उससे उनके जीवन में होने वाले सांस्कृतिक परिवर्तन को छायाचित्र के माध्यम से प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है ।

6- शोध की उपयोगिता /उपादयेता:- हमारे शोध का शीर्षक ‘‘ बालाधाट जिले मे बैगाओं के लिए चलाई जा रही सरकारी योजनाओं का उनकी संस्कृति पर प्रभाव व अध्ययन ’’ है,

अर्थात हम शोध के माध्यम से यह जानने का प्रयत्न् कर रहे हैं कि जो कल्याणकारी योजनाए बैगाओं के विकास के लिए चलाई जा रही है या सिर्फ बे ैगाओं के पारिवारिक जीवन में परन्तु हो रहा है बल्कि बैंगाओं के सामाजिक आर्थिक जीवन में परिवर्तन हो रहा और इसी परिवर्तन और विकास के सोपान चढ़ते-चढते कही नाकही बैंगाओं की पुरानत संस्कृति, उनके रहन-सहन मं परिवर्तन दिखाई देने लगा है। उपरोक्त शोध की यही उपयोगिता है इसके माध्यम से हम यही सिद्ध करने का प्रयत्न कर रहे है कि विकास की कीमत संस्कृति के माध्यम से चुकानी होगी।

7- शोध अध्ययन की सीमा -

1. अध्ययन का विषय मध्यप्रदेश के बालाघाट जिले के बैहर तहसील के ग्राम मछुरदा की बैगा जनजाति है।
2. अध्ययन बैगा जनजाति के लिए चलाई जा रही विभिन्न सरकारी योजनाओं के प्रभाव से संबंधित है।
3. अध्ययन की इकाई बालाघाट जिला 180 ग्राम वाले बैहर, बिरसा, एवं परसवाडा विकासखण्ड को मान्य किया गय है तथा आवश्यकतानुसार भौगोलिक जानकारी को शामिल किया गया है।
4. बैगाओं के विकास के लिए चलाई जा रही योजनाओं उनकी संस्कृति में पडने वाले प्रभाव के अध्ययन को समाहित किया गया है।

भौगोलिक स्वरूप

अ- ऐतिहासिक पृष्ठभूमि -

रेवा नदी के दक्षिणी भाग में सतपुड़ा की पर्वत श्रेणियों, तथा मध्य मे विकसित समतल पठार नदी घायिों के समतल भूमि पर स्थित बालाधाट जनदप के इतिहास की जाकारी 36 ईसा वर्ष पूर्व गेगास्थनीज के अभिलेखों से उपलब्ध होती है , किन्तु राजनैतिक परिदृष्य 1868 से प्रारंभ मिलता है जब भण्डारा (महाराष्ट्र), मण्डला एवं सिवनी के ऊबड-खाबड़ भू-भाग को एक जनपद के रूप में मान्यता दी गई।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमियों में छत्तसीगढ के दुर्ग जिले में नवप्रस्तर समूह की चट्टानों मं उपलब्ध गुफायें एंव वित्रकारी, महापाषाणी कब्रो से स्पष्ट होता है कि इस भू-भाग में आदिम मानव का निवास था। बालाघाट के बुड़हा क्षेत्र के गंगेरिया में मिले परातात्विक सामग्री से उक्त तथ्यों की पुष्टि होती है। यद्यपि बालाघाट एक जिले के रूप में 19वी शदी में अस्तित्व में आया, किन्तु जिन क्षेत्रों को मिलाकर इस जिले का निर्माण किया गया, उनके इतिहास पर दृष्टिपात करने पर स्पष्ट होता है कि यह भू-भाग भारत के अन्य क्षेत्रों की भांति नन्द, मौय, सातवाहन, वाकाटक, कल्चुरी, चालुक्य एवं राष्ट्रकूट, परमार, गोड़वंशीय छत्रयों, मुगलों, मराठों तथ अंग्रेजों के आधीन समय-समय पर शासित किया गया।

वर्ष 1867-1973 के दौरान भण्डारा, मण्डला, तथा सिवनी जिलों के भागों को मिलाकर बालाघाट क रूप मे स्वीकृत किया गया। वर्ष 1854 से 1867 तक इस जिले के परसवाडा, बैहर क्षेत्र मण्डला जिले के अन्तर्गत थे। कटंगी, लालबर्रा क्षेत्र सिवनी जिले के अन्तर्गत तथा लांजी और किरनापुर मण्डारा जिले के अधीन थे। वर्ष 1861 में जब अंगे्रजों ने मध्यप्रान्त नाम प्रांत का निर्माण किया, तब उसमें बालाघाट नाम का कोई जिला नही था। वर्ष 1867 मे मध्यप्रान्त के मुख्य आयुक्त सर रिचर्ड टेम्पल ने एक नए बालाघाट जिले का निर्माण किया, जिसके अन्तर्गत परसवाडा, लांजी, लालबर्रा, आदि क्षेत्र शामिल थे। केन्टन लोक प्रथम बार बालाघाट कलेक्टर बनाकर भेजा गया। स्थायी तौर पर लि की घोषणा वर्ष 1971में की गई जो कि संशोधन उपरान्त 1895 मे बालाघाट जिला स्वीकृत होकर आया और नवम्बर 1956 मे स्वतंत्र जिला घोषित किया गया। वर्तमान में म0प्र0 राज्य के जबलपुर संभाग का यह एक प्रमुख जिला है जो मैगनीज एंव तांबा उत्पादन के लिए समूचे भारत में जाना जाता है।

ब- भौगोलिक पृष्ठभूमि -

बालाघाट मध्यप्रदेश राज्य में जबलपुर संभाग के दक्षिणी जिलों मे से एक जिला है। जिले का मुख्यालय मूलतः बुरहा या बूरा कहा जाता था, तथापि बाद में इसका नाम बालाघाट रखा गया, जो मूलतः केवल इस जिले का नाम था।

स्थिति एवं विस्तार:-

बालाघाट जिले में सतपुडा का दक्षिण-पूर्वी क्षेत्र तथा उपरी बैनगंगा घाटी समिलित है। यह मध्यप्रदेश राज्य मे जबलपुर संभाग के दक्षिणी जिलों में से एक जिला है जो 21 19 से 22 24 उत्तरी अंक्षास एवं 79 31 पूर्वी देशान्तर से 81 3 पूर्वी देशान्तर के मध्य एक उबड-खाबड चतुष्कोण क्षेत्र के रूप में फैला है। इसकी लम्बाई दक्षिण-पश्चिम से उत्तर -पूर्व तक 170

www.ignited.in

कि.मी. है । इसका भौगोलिक क्षेत्रफल 9245 वर्ग कि.मी. है । कुल क्षेत्रफल का 15 प्रतिशत शहरी एवं 85 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र है ।

बालाघाट जिला उत्तर में मण्डला, दक्षिण में महाराष्ट्र राज्य का भण्डारा जिला, पूर्व मे छत्तीसगढ का राजनांदगावं जिला और पश्चिम में सिवनी जिले से घिरा हुआ है । उत्तर- पश्चिम में बैनगंगा नदी इस जिले को सिवनी जिले से अलग करती है जबकि पुनः बैनगंगा एवं इसकी सहायक नदियां बावनथड़ी तथ बाघ नदी दक्षिण में सीमा निर्धारित करती है । चिल्पी घाट के तल पर बहने वाली टांडा तथा बंजर नदिया पूर्वी सीमा का निर्धारण करती है ।

भूगर्भिक संरचना

अलग-अलग वैज्ञानिकों द्वारा बालाघाट जिले की भूर्भिक संरचना का अध्ययन किया गया । सन् 1883 में स्लूम फील्ड तथा सन् 1888-89 में श्री बोस ने बालाघाट जिले के कुछ क्षेत्रों की भूगर्भिक संरच्ना का अध्ययन किया बाद में एल.एल. फार्मर द्वारा यहां की भूगर्भिक संरचना का अध्ययन कर 1906 के बालाघाट डिस्ट्रिक गजेटियर में जिले की भूगर्भिक संरचना पर विस्तार से प्रकाश डाला गया । 1956 मे ट्रेल्डोकेटिल महोदय ने 1960 में के.डी. शुक्ला तथा एन आनंदलवार महोदयों ने 1963 में भारतीय भू-सर्वेक्षण विभग द्वारा 1968 मे श्री आर चक्रवर्ती तथा 1969 में एस राय ने जिले की भूगर्भिक संरचना पर विशेष प्रकाश डाला है ।

उपरोक्त अध्ययनों के आधार पर बालाघाट जिले की चट्टानों का निम्न सात क्रमों मे ंविभाजित किया जा सकता है -

1- आर्किनियम - अ- बैहरनीस ब- चैरियानीस

2- चिल्पी घाटी श्रेणी

3- ग्रेनाईट

4- दकन टे्रप

5- लेमेटा श्रेणी

6- लेटेराईट

7- नवनिर्मित चट्टान

1- आर्किनियम -

ये चट्टाने जिले की सबसे प्राचीन चट्टाने है, ये जिले के बहुत बड़े क्षेत्र को घेरती है प्राचीनतम चट्टाने बालाघाट के उत्तर मे पाई जाती है जिन्हें सोनवानी श्रेणी का नाम दिया गया है । आर्किनियम चट्टानों को दो भागो में विभक्त किया जा सकता है - 1- बैहरनीस 2- चैरियानीस

बैहरनीस बहुत अधिक शाल्कित है तथ उनमें मुख्य रूप से बायोराईट एवं माईकस शिष्ट की चट्टाने मिलती है । ये बैहर और परसवाडा क्षेत्र में तथा कही-कहीं वारासिवनी और कटंगी मे भी मिलती है ।

चैरियानीस पल्लवित हार्न ब्लेण्ड ग्रेनाईट चट्टाने हैं, ये अधिक मात्रा में रवेदार है, जो जिले के सुदूर उत्तर में पाई जाती है ।

2- चिल्पी घाटी श्रेणी -

सोनवानी श्रेणी के उपर चिल्पी घाटी श्रेणी की चट्टाने पीय जाती है। इनकी रचना स्लेट क्वार्टज, ग्रिट्स, कांग्लानरेट, ग्रीनस्टोन, सेण्डस्टोन, कायलाईट्स एवं माईका से हुई है । जिले के आधे भाग में विस्तृत रूप में देखी जा सकती है । इसके प्रमुख क्षेत्र है - अ- वारासिवनी- भीमलाट पेटी, ब-ह्टा का ह्श्यांश, स- मानपुर - भण्डेरी पेटी, द- लांजी - रायवाडा और बीजागढ के चारों ओर के क्षेत्र

3- ग्रे्रनाइट -

लांजी के दक्षिण में कुल्पा के आस-पास हार्न ब्लेण्ड ग्रे्रनाईट का बड़ी मात्रा मे नग्नीकरण हुआ है ।

4- दकन टे्रप -

दकन टे्रप अर्थात बेसाल्ट की चट्टाने मुख्यतः जिले के उत्तर पूर्वी भाग मे मिलती है । बंजर घाटी के उत्तर-पूर्वी क्षेत्र मे ये विस्तृत है तथा रायगढ के पठारी क्षेत्र में एंव जिले के मध्य भाग में कही-कहीं पाई जाती है ।

5- लेमेटा श्रेणी -

इसका निर्माण गिरी लाईम स्टोन से हुआ है । इसके मुख्य क्षेत्र दकन ट्रेप के ही क्षेत्र है । यह दकन ट्रेप के उपर पाई जाती है, तथा इनक संस्तर कही भी 15 फिट से मोटी नही है । जहॉ चूने

के पत्थर का नग्नीकरण हुआ हे, वहीं ये चट्टाने किनारों पर स्पष्ट रूप से दिखाई देती है ।

6- लेटेराईट '

इनका निर्माण अभिनूतन युग मे हुआ है । निम्न सतह में पाए जाने वाले लेटेराइ निक्षेप बुदबुदा के मैदानी क्षेत्र में और लीलामेटा के पहाडी क्षेत्र में पाए जाते हैं । उॅची सतह पर पठार के कई भागों मे विशेष रूप से समनापुर सोनपुर, लौगूर के आस-पास लेटेराईट चट्टाने पाई जाती है । दबाव के फलस्वरूप इसके रंगों में भिन्नता पाई जाती है । सामान्यतः उसका रंग लाल एवं बैगनी किन्तु कभी-कभी हल्का पीला, क्रीम, भूरा और गुलाबी भी होता है। इसमें एल्युमीनियम की काफी मात्रा होने के कारण ये क्षेत्र बालाघाट जिले के प्रमुख खनिज उत्पादक क्षेत्र है ।

7- नवनिर्मित चट्टाने -

इसके अन्तर्गत रेत, मिट्टी कंकरीली मिट्टी के निक्षेप आते हैं, जो क्वार्टजाईट के विच्छेन के परिणामस्वरूप मुख्यातः बनता है तथा ला आक्साईड से रंगकर लाल दिखाई देता है। इसका मुख्य क्षेत्र बैहर का पठार है । कछारी मिट्टी और रेत मुख्य रूप से नदियों की घाटी में मिलती है ।

भौतिक स्वरूप

उच्चावच -

पर्वत श्रेणियों, सीढीनुमा पठारों, कगारों तथा नदी कछारों से युक्त इस भू-भाग की औसत ऊॅचाई 750 मी. लगभग पाई जाती है । अध्ययन के लिए चयनित बालाघाट जिला पूव में मैकल पर्वत तथा पश्चिम में महादेव पर्वत श्रेणियों के मध्य स्थित सतपुडा पर्वत श्रेणी का दक्षिणी पाश्र्व है, जिसका सहज स्वरूप एक लहरदार धरातलीय स्वरूप की प्रस्तुति करता है । जहॉ सतपुडा की श्रेणियों 900 मीटर से अधिक ऊॅचाई की है, वही दक्षिणी- पश्चिमी बैनगंगा घाटी 285 मी. की ऊॅचाई से सीमांकित दृष्टि गोचर होती है । इस भू-भाग में स्थित पठारी क्षेत्र परिवर्तनशील ऊॅचाई में एक दूसरे से उपर उठे हुये पाये जाते है । बैहर के पूर्वी भाग में स्थित उच्च स्थल नर्मदा एंव गोदावरी क्रम क ेनदियों का जल विभाजक है । विच्छेदित पठारों, कगारों से युक्त इस भू-भाग को उच्चवच की दृष्टि से निम्नांकित दो मुख्य विभागों में विभाजित किया जाता है-

1- उत्तर पूर्वी विच्छदित पठारी प्रदेश

2- पश्चिम एवं दक्षिण -पश्चिम का लहरदार मैदानी प्रदेश

सारणी

बालाघाट जिले की प्रमुख पर्वत चोटियॉ

क्र	नाम चोटी	समुद्र तल से ऊॅचाई मीटरों मे	स्थित उपभौतिक प्रदेश
1	चन्द्रपुरी	917.40	रायगढ पठार
2	लिंगादादर	907.00	रायगढ पठार
3	सावरझोडी	634.6	बैहर पठार
4	वटिया	548.6	बैहर पठार
5	झाॅडापहाड	782.7	बैहर पठार
6	लुटना	798.00	बैहर पठार
7	खरीकोडा	692.00	बैहर पठार
8	लीला	822.60	बैहर पठार
9	पंडरवानी	638.00	सोनवानी

अ- उत्तर पूर्वी विच्छदित पठारी प्रदेश-

बालाघाट का यह विच्छेदित पठारी प्रदेश पश्चिम में महादेव की पहाड़ियों और पूर्व में मैकल श्रेणी के मध्य स्थित यह एक प्रमुख जल विभाजक क्षेत्र है, जिसकी औसत ऊँचाई 457 मी. से 916 मी. के बीच पायी जाती है। इस विच्छेदित पठारी प्रदेश को निम्नांकित चार उपविभागो में बांटा गया है-

1. बंजर घाटी एवं परसवाड़ा का पठार

2. रायगढ़ का पठार

3. सोनवानी पहाड़ी क्षेत्र

4. उत्तर-पश्चिमी मध्यवर्ती पठार

1. बंजर घाटी एवं परसवाड़ा पठार - यह पठार लगभग त्रिभुजाकार है, जो समुद्र सतह से 450 से 606 मीटर ऊँचा है। इसका विस्तार उत्तर तथा उत्तर-पूर्व में बंजर नदी की घाटी से लेकर पश्चिम में परसवाड़ा पठार तक तथा दक्षिण में बालाघाट-कटंगी मैदान तक है।

2. रायगढ़ का पठार - रायगढ़ पठार की ऊँचाई समुद्र तल से 609 मी. से 914 मीटर के मध्य पाई जाती है। यह भू-भाग

www.ignited.in

जिले के उत्तर-पूर्वी सीमा पर स्थित है। जहाँ हलोन नदी अपनी सहायक नदियों के साथ दक्षिण-पूर्व से उत्तर को बहती है। नदी अपरदन के फलस्वरूप इस पठारी भू-भाग का धरातल विच्छेदित है।

3. सोनवानी पहाड़ी क्षेत्र - यह क्षेत्र महादेव पहाड़ियों का भाग है, जिसकी समुद्र सतह से ऊँचाई 500 मीटर तक पाई जाती है।

4. उत्तर पश्चिमी पर्वत घाटी क्षेत्र या मध्यवर्ती पठार - परसवाड़ा पठार के पश्चिम तथा बैनगंगा नदी द्वारा सीमांकित यह पठार त्रिभुजाकार है, जिसकी औसत ऊँचाई 450 से 666 मीटर है। विशम धरातलीय दृश्यावलियों से युक्त इस भू-भाग में समतल क्षेत्र, उतार-चढ़ाव वाले ढलुआ क्षेत्र परिवर्तनशील प्रवृत्ति में दृश्टिगोचर होते है। इस पठार का अधिकांश ढाल पश्चिम की ओर एवं उत्तर-पूर्व में उत्तर की ओर है। वैनगंगा की सहायक नदियां जैसे नहारा, उत्कल, घिसर्री, सोन, देव नदियां इस पठारी भाग से खड़े ढाल द्वारा जल प्रपात के रूप में नीचे मैदानी भाग में बैनगंगा नदी में जा मिलती हैं।

ब. पश्चिम एवं दक्षिण-पश्चिम का लहरदार मैदानी प्रदेश:

सोनघाटी के सुदूर उत्तरी भाग को छोड़कर जिले का संपूर्ण पश्चिमी एवं दक्षिणी भाग इसके अन्तर्गत आता है। विस्तृत अध्ययन हेतु इसे निम्नांकित तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है-

1. उत्तरी-पश्चिमी मैदा

2. सोननदी घाटी

3. बालाघाट कटंगी मैदन ।

1. उत्तर-पश्चिमी मैदान - इस मैदान की समुद्र सतह से औसत ऊँचाई 303 से 450 मीटर है। भूगर्भीय दृश्टि से इस क्षेत्र की चट्टानें अर्कियन, नीस एवं ग्रेनाइट प्रकार की हैं, जिनमें मैगनीज निक्षेपित पाया जाता है। इसका ढाल उ.पू. से दक्षिण-पूर्व की ओर है। बैनगंगा नदी इस मैदान को पूर्व एवं पश्चिम दो भागों में विभाजित करती है। इस मैदान के निर्माण में नदियों के अपदरन एवं निक्षेपण क्रिया का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। छोटी-छोटी पहाड़ियां भी यत्र-तत्र दृश्टिगोचर होती है, जिनके शीर्श चपटे है, जिससे स्पश्ट होता है कि यह भू-भाग समतल प्राय की अवस्था की ओर उन्मुख है। इन पहाड़ियों के पाद क्षेत्र में मैगनीज के निक्षेप मिलते है।

2. **सोननदी घाटी -** सोननदी का दो-तिहाई भाग ऊबड़-खाबड़ पठारी क्षेत्र है। घने वनों से आच्छादित इस भू-भाग में चिल्पी घाट सीरीज एवं नीस सीरीज की चट्टाने संस्तरित है। नदी घाटी का निचला भाग उपजाऊ है। इस उपजाऊ मैदान का विस्तार उत्तर से दक्षिण 6 कि.मी. एवं पूर्व से पश्चिम 49 कि.मी. है। मध्य के पठारी भाग में नदी की गहराई अधिक है एवं यहां घाटी का दाहिना ढाल खड़ा है।

3. **बालाघाट-कटंगी मैदान -** जिले के दक्षिणी भाग में अर्द्धगोलाकार रूप में बालाघाट-कटंगी मैदान स्थित है। यत्र-तत्र छोटे-चपटे शीर्श युक्त टीलों से युक्त इस भू-भाग से लाल मृत्तिका के निक्षेप दृश्टिगोचर होते है, किन्तु वारासिवनी के पूर्व में चन्दन नदी के किनारों पर समतल भूमि जिसका ढाल अत्यन्त मंद है में (केरोला, हट्टा एवं धनसुआ में) भी काली मिट्टी निक्षेपित पाई जाती है। धनसुआ के उत्तर-पूर्व में धनसुआ की पर्वत श्रेणियां है। पर्वतीय एवं मैदानी भागों के मध्य 'क्लिफ' पाया जाता है जहां ऊँचाई 433 मीटर है।

अपवाह तंत्र:

प्रायद्वपीय भारत के समान ही जिले का अधिकांश भाग पठारी है। इस पठारी भाग को नदियों द्वारा कांटा छांटा गया है। इस पठारी भाग का मध्यवर्ती भाग जल विभाजक है, जो 837 मीटर ऊँचा है। जिले में वृक्षाकार जल प्रवाह प्रणाली पाई जाती है। दो अपवाह तंत्रों के अन्तर्गत जिले की नदियों को विभाजित किया जा सकता है। प्रथम पश्चिम, उत्तर तथा दक्षिण में वैनगंगा और दूसरी उत्तर-पूर्वी भाग में नर्मदा अपवाह तंत्र। नर्मदा नदी प्रणाली के अन्तर्गत बंजर, हालोन, जमुनिया, तन्नौर और कन्हार नदियां आती है। बैनगंगा नदी प्रणाली में चंदन, सारथी, बावनखड़ी, मनकौर, नहारा, उत्कल, घिसर्री, देव, सोन और बाघ नदियों का समावेश होता है। जिले की सभी नदियां प्रौढ़ा अवस्था की मानी जाती है, इनमें से बड़ी नदियां ही ग्रीश्म ऋतु में प्रवाहित रहती है। जिले की नदियां नावगम्य नहीं है। सिंचाई

की दृश्टि से कुछ नदियों का महत्व है, जिनमें बैनगंगा एवं बाघ प्रमुख है।

बैनगंगा जल प्रवाह प्रणाली:

बैनगंगा जल प्रवाह प्रणाली के अन्तर्गत निम्नलिखित नदियों का समावेश होता है-

बैनगंगा - यह जिले की अत्यनत महत्वपूर्ण नदी है। यह सिवनी जिले में परताबपुर ग्राम के ऊपर पहाड़ी (21°55’ उ. 79°34’ पू.) से निकलती है। बैनगंगा नदी जिले में पादरीगंज रेलवे स्टेशन से 7 कि.मी. उत्तर-पश्चिम की ओर से प्रवेश करते हुए बालाघाट सिवनी जिले की सीमा बनाती है। इसके बाद यह जिले के पश्चिमी मैदान में प्रवेश करती है और दक्षिण की ओर मुड़कर वारासिवनी - बालाघाट तहसील की सीमा निर्धारित करती है। आगे चलकर यह नदी बालाघाट एवं भंडारा जिले (महाराश्ट्र) की सीमा भी बनाती है। बैनगंगा के बाएं किनारे से मनकुमार, माहकरी, नहारा, उत्कल एवं बाघ नदियां आकर मिलती हैं। दाएं किनारे 11 की सहायक नदियां सारथी, चन्दन एवं बावनथड़ी है। इस नदी की चैड़ाई लगभग 250 मी. है तथा जिले में इसकी लंबाई 98 कि.मी. है।

सारणी क्रमांक

जिला बालाघाट की जल प्रवाह व्यवस्था

क्र	अनवर्ती नदी	लम्बाई कि.मी.	अपवाह क्षेत्र	परवर्ती नदी लम्बाई कि.मी.	
अ	वैनगंगा	98	7110	दक्षिणवर्ती	
				हिर्री	40
				सर्राटी	39
				चुनाई	
				चन्दन	57
				बावनथड़ी	89
				वामवर्ती	
				सावरझोटी	
				महकरी	29
				नहार	56
				उत्कल	45
				बाघ	45
				सोन	45

ब	नर्मदा		2115		
	हलोन	52	415		
	बंजर	115	1728	दक्षिणवर्ती	
				जमुनिया	25
				तन्नौर	27
				वामवर्ती	
				कन्हार	

सारथी नदी: यह सिवनी जिले में उद्गम के पश्चात् लालबर्रा राजस्व वृत्त के सुरक्षित वनीय क्षेत्र से जिले में प्रवेश करती है। दक्षिण-पूर्व की ओर प्रवाहित होते हुए बैनगंगा नदी में मिल जाती है। सारथी योजना से लालबर्रा का क्षेत्र लाभान्वित हो रहा है। इसकी लंबाई 34 कि.मी. है।

चन्दन नदी: चन्दन नदी जिले में उत्तर-पश्चिमी भाग से प्रवेश करती है। यह पूर्व दिशा में वारासिवनी तक प्रवाहित होती है और वारासिवनी के समीप तीव्र मोड़ लेकर दक्षिण की ओर प्रवाहित होते हुए बैनगंगा में मिल जाती है। चंदन की लंबाई **57** कि.मी. है।

बावनथड़ी नदी: यह नदी सिवनी जिले के पठार से जिले के पश्चिमी भाग में प्रवेश करती है। यह दक्षिण दिशा की ओर दक्षिण-पश्चिम कोण तक बहती है। तत्पश्चात् पूर्व दिशा की ओर मुड़ जाती है। इसकी तली में चट्टानों का अभाव है, यह उथली नदी है। इसकी कुल लंबाई 89 कि.मी. में से 48 कि.मी. जिले की सीमा में स्थित है।

नहारा नदी: इसका उद्गम मध्यवर्ती पठार है। यह घनसुआ जंगल तथा चरेगांव के आस-पास विस्तृत भाग में बहती है। इसकी लंबाई 56 कि.मी. है। यह उत्तर-पूर्व में प्रवाहित होते हुए पूर्वी किनारे पर चाचारी के निकट बैनगंगा से मिल जाती है।

जलवायु

मानवीय अधिवास को प्रभावित करने वाले प्रमुख भौतिक तत्वों में धरातल एवं जल स्त्रोत के बाद जलवायु का महत्वपूर्ण स्थान होता है। जलवायु मानवीय सभ्यता के विकास हेतु सतत् सहयोग प्रदान करती रहती है। विश्व में प्राचीन काल से लेकर वर्तमान काल तक उन्हीं प्रदेशों में सभ्यतायें विकसित हुई हैं, जो जलवायु की दृष्टि से अनुकूल क्षेत्र रहे। प्रसिद्ध भूगोल वेत्ता हंटिंगटन ने मानव अधिवास के लिये जलवायु का अनिवार्य तत्व के रूप में विश्लेषण किया है। मानव उसी क्षेत्र में अपने अधिवास स्थापित करना चाहता है, जहाँ मानव स्वास्थ्य के लिये जलवायु अनुकूल हो। जलवायु मनुष्य को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनो रूप में प्रभावित करती है, अतः अधिवास चयन हेतु जलवायु का अध्ययन आवश्यक हो जाता है। अधिवास के अतिरिक्त मानव की समस्त क्रियायें जलवायु द्वारा नियंत्रित एवं प्रतिपादित होती है। फलतः भौगोलिक पृष्ठभूमि में जलवायु एक आवश्यक घटक के रूप में है।

अध्ययन क्षेत्र बालाघाट जिला कर्क रेखा के ठीक दक्षिण स्थित है। जिसके कारण इस भू-भाग में उष्ण कटिबन्धीय जलवायु पायी जाती हैं। जिसकी प्रमुख विशेषता ग्रीष्म ऋतु में वर्षा तथा शीत ऋतु का कोण होना हैं। वर्षा मानसूनी हवाओं द्वारा मध्य जून से सितम्बर तक होती है। इस भू-भाग में तापमान एवं वर्षा सम्बन्धी अन्तराल अधिक विकसित नहीं पाये जाते हैं।

तापमान

अध्ययन क्षेत्र बालाघाट जिला के शीतलतम मास जनवरी का औसत तापमान 16.3॰ से. के लगभग रहता है। अतः शीतऋतु कोष्ण रहती है। फरवरी के अन्तिम सप्ताह तथा मार्च के प्रारंभ में तापमान में वृद्धि होने लगती है। मार्च का औसत तापमान 23.6• से. रहता है। इस अवधि में दिन का समय गर्म एवं रातें शीतल होने के कारण दैनिक ताप परिसर 20॰ से. तक रहता है। अप्रैल माह में वायु गर्म होने के कारण रात्रि के तापमान में भी तीव्रता से वृद्धि होने लगती है। अप्रैल माह के (सारणी क्र. 1.3) बाद तापमान निरंतर बढ़ने लगता है। मई महीना यहाँ सबसे गर्म होता है। इन दिनों औसत तापमान 34.1॰ से. तक पहुँच जाता है। मई महीने का अधिकतम तापमान 45.4॰ से. एवं न्यूनतम तापमान 21.4॰ पाया जाता है। इस माह में तापमान

की अचानक वृद्धि से गर्म हवाओं (लू) का प्रकोप बढ़ने लगता है।

जून माह में मानसून के प्रस्फुटन के साथ समस्त अध्ययन क्षेत्र के औसत तापमान में ह्रास होने लगता है। इस समय औसत तापमान 33.1॰ से. रहता है, किन्तु मानसून आगमन के पश्चात् जुलाई में तापमान घटकर औसत 28.0॰ से. रह जाता है। जुलाई की अपेक्षा अगस्त माह में औसत तापमान 1.5॰ से. 2.0॰ से. तक नीचा रहता है। जुलाई, अगस्त तथा सितम्बर महीनों में वायु में आद्रता एवं मेघाच्छादन के फलस्वरूप मासिक औसत ताप परिसर 10॰ से. से कम रहता हैं। सितम्वर के अन्तिम तथा अक्टूवर के प्रथम सप्ताह में मेघाच्छान्नता कम होने के कारण वायु में शुश्कता आ जाती है, तथा दिन में तापमान थोड़ा बढ़ जाता है, किन्तु कुल औसत तापमान अक्टूवर में 24.8॰ से. तथा नवम्बर में घटकर 20.5॰ से. हो जाता है।

वायुभार एवं हवाएँ

तापमान एवं वायुभार में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। बालाघाट जिला में सर्वाधिक वायुभार दिसम्बर एवं जनवरी महीनों में क्रमशः 979.5 मिलीवार एवं 981.1 मिलीवार रहता है। मई सबसे गर्म महीना होता है। अतः इन दिनों वायुभार काफी कम 959.2 मिलीवार रहता है। यह न्यूनतम वायुभार मानसून प्रस्फुटन काल तक बना रहता है।

जून माह में मानसून के प्रस्फुटन के साथ समस्त पठार के औसत तापमान में ह्रास होने लगता है। इस समय औसत तापमान 33.1°ब् रहता है, किन्तु मानसून आगमन के पश्चात जुलाई में तापमान घटकर औसत 28.0°ब् रह जाता है।

जुलाई की अपेक्षा अगस्त माह में औसत तापमान 1.5°ब् से 2.0°ब् तक नीचा रहता है। जुलाई, अगस्त तथा सितम्बर महीनों में वायु में आद्रता एवं मेघाच्छादन के फलस्वरूप मासिक औसत ताप परिसर 10°ब् से कम रहता है।

सितम्बर के अन्तिम सप्ताह तथा अक्टूबर के प्रथम सप्ताह में मेघाच्छान्नता कम होने के कारण वायु में शुष्कता आ जाती है तथा दिन में तापमान थोड़ा बढ़ जाता है। किन्तु कुल औसत तापमान अक्टूबर में 24.8°ब् तथा नवम्बर में घटकर 20.5°ब् हो जाता है।

अध्ययन क्षेत्र बालाघाट जिला में मानसूनी हवाएँ चलती है। मानसूनी हवाओं पर ऋतुओं का प्रभाव परिलक्षित होता है। जून से सितम्बर तक हवाएँ

पश्चिम एवं दक्षिण-पश्चिम से चलती है। नवम्बर से फरवरी माह के मध्य इनका रुख उत्तर एवं पूर्व से दक्षिण-पश्चिम की ओर होता है।

वर्षा

अध्ययन क्षेत्र बालाघाट जिला में अरब सागर एवं बंगाल की खाड़ी दोनों ही शाखाओं की मानसून से वर्षा होती है, किन्तु अरब सागरीय शाखा से ज्यादा मात्रा में वर्षा उपलब्ध होती है। वर्षा अधिकांश गं्रीष्म ऋतु में होती है। तापमान एवं वायुभार की तुलना में वर्षा की मात्रा का क्षेत्रीय वितरण असमान है। पूर्व से पश्चिम की ओर परसवाड़ा तक वर्षा की मात्रा घटती जाती है।

परसवाड़ा से पश्चिम पुनः वर्षा की मात्रा बढ़ने लगती है, जिसका कारण पूर्वी पठारी भाग में बंगाल की खाड़ी वाली मानसून तथा पश्चिमी भाग में अरब सागरीय शाखा के द्वारा वर्षा का होना मुख्य कारण है।

सारणी क्रमांक

जिला बालाघाट में औसत वर्शा एवं आद्रता

यहॉ की औसत वर्शा 1623 मि.मी. होती है।

वर्शा ऋतु का विवरण:

मासिक वर्शा के मानचित्रों की तुलना करने से स्पश्ट होता है कि इस क्षेत्र की अधिकांश वर्शा, वर्शा ऋतु में होती है, जो समग्र वर्शा के 90 प्रतिशत भाग है। भारत में अधिकांश निर्वतित मानसून केवल तमिलनाडु तट पर ही प्रबल रहता है तथा इस घाटी का क्षेत्र उसके प्रभाव क्षेत्र में नहीं आता। इस क्षेत्र में सर्वाधिक वर्शा अगस्त महीने में होती है, जिसका औसत 551.1 मि.मी. है। जुलाई एवं सितम्बर में क्रमशः 432.4 एवं 295.9 मि.मी. वर्शा का औसत पाया जाता है, जबकि जून में 180.5 मि.मी. वर्शा प्राप्त होती है। अप्रैल माह में वर्शा सबसे कम होती है, जिसका औसत 3.6 मि.मी. है।

www.ignited.in

शीतकालीन ऋतु में जनवरी महीने की औसत वर्शा सर्वाधिक 23 मि.मी. है, जबकि नवम्बर में 11.1 मि.मी. एवं दिसम्बर में 9.4 मि.मी. औसत वर्शा होती है।

आद्र्रता एवं मेघाच्छन्नता:

अध्ययन क्षेत्र बालाघाट जिला में वर्शा का जल निश्चित ऋतु में ही केन्द्रित होने के कारण आद्र्रता तथा मेघाच्छन्नता में भी ऋतु के अनुसार परिवर्तन होता है। जुलाई, अगस्त और सितम्बर महीनों में सम्पूर्ण प्रदेश में वर्शा होने के कारण इन तीन महीनों में मेघाच्छादन तथा आद्र्रता भी अधिकांश उच्च रहती है। मानसून अवधि में आपेक्षित आद्र्रता 89 से 90 प्रतिशत तथा मेघाच्छान्नता 7 से 9 दशांश तक रहती है। मार्च, अप्रैल तथा मई महीनों में तापमान अधिक होने के कारण आपेक्षिक आद्र्रता न्यूनतम होती है जिसका मान 30 से 45 प्रतिशत के मध्य पाया जाता है। अन्य महीनों में आद्र्रता का प्रतिशत 45 से 70 प्रतिशत के बीच पाया जाता है।

ऋतुवत मौसम का स्वरूप:

अध्ययन क्षेत्र बालाघाट जिला में जलवायु की दशाओं के अनुसार 3 ऋतुयें पायी जाती हैं-

1. शीत ऋतु 15 अक्टूवर से 15 मार्च तक

2. ग्रीश्म ऋतु 16 मार्च से 15 जून तक

3. वर्शा ऋतु 16 जून से 15 अक्टूवर तक

1. शीत ऋतु:

15 अक्टूवर के आसपास सूर्य क्रमशः मकर रेखा की ओर बढ़ने लगता है, जिसके कारण अध्ययन क्षेत्र बालाघाट जिला के तापमान में तीव्रता से ह्रास होने लगता है। शीततलम मासिक तापमान नवम्बर से जनवरी तक घटता जाता है। फरवरी महीनें से तापमान में वृद्धि होने लगती हैं।

शीतकाल में मौसम सामान्यतया शुश्क रहता है, किन्तु कभी-कभी दिसम्बर एवं जनवरी में शीतकालीन चक्रवातों से 2-3 से.मी. वर्शा हो जाती है। सिंचाई के साधनों के अभाव के कारण कभी-कभी पाला के प्रभाव से फसलों को काफी क्षति पहुंचती है।

शीतऋतु की प्रमुख विशेताएँ दैनिक तापान्तर का अधिक होना, निम्न आद्र्रता, उच्च वायुभार, स्वच्छ आकाश एवं सुहावना मौसम है।

2. ग्रीश्म ऋतु:

16 मार्च से 15 जून तक का समय ग्रीश्म ऋतु के अन्तर्गत आता है। सबसे गर्म माह मई का अधिकतम तापमान 45.4॰ सेल्सियस तक रहता है, जबकि औसत मासिक तापमान 34.1॰ सेल्सियस रहता है।

इस ऋतु में वर्शा नगण्य तथा आद्र्रता बहुत कम होती है। मई में कभी-कभी गरज के साथ छीटे पड़ते है तथा ओलावृश्टि भी हो जाती है। लू-धूल के बवण्डर तथा साधारण आँधी मानसून आगमन तक प्रारंभ रहती है।

3. वर्शा ऋतु:

जून के तृतीय अथवा चैथे सप्ताह में अध्ययन क्षेत्र बालाघाट जिला में मानसून का प्रस्फुटन हो जाता है, जिसके कारण ग्रीश्म ऋतु, वर्शा ऋतु में परिवर्तित हो जाती है। वर्शा के कारण जुलाई एवं अगस्त में तापमान कम हो जाता है, जो अक्टूवर तक निरन्तर कम होता जाता है। वर्शा के कारण इन दिनों नदी नालों में अक्सर बाढ़ें आ जाती हैं।

मिट्टियाँ:

भूतल के किसी क्षेत्र की सम्पदा एवं संस्कृति मिट्टी की प्रकृति से प्रभावित होती है। सिन्धु, नील एवं दजला फरात की सभ्यताएँ उपजाऊ मिट्टी में ही विकसित होकर संसार के अन्य क्षेत्रों में फैली थी।

मिट्टियों का निर्माण भू-खण्ड की चट्टानों के विखंडन के कारण होता है। मिट्टियाँ खनिज तथा कार्बनिक पदार्थो का मिश्रण होती है, जिनसे वनस्पति का विकास होता है। भौतिक तथा रासायनिक भिन्नता के कारण मिट्टियाँ अनेक प्रकार की होती है। मिट्टी एवं वनस्पति मूलतः ऋतु, वातावरण, तापमान, धूप, आद्र्रता, वर्शा, वायु की गति एवं वायु मण्डलीय गैस आदि पर आधारित है। पौधों का विकास विशेश रूप से मिट्टी की उर्वरा शक्ति पर निर्भर करता है, अतः विभिन्न जीव

एवं पौधों के विकास के लिये मुख्यतः उर्वरा शक्ति एवं भूमि का उपजाऊपन आवश्यक है। सामान्यतः उत्तम किस्म की मिट्टी के अन्तर्गत निम्न 5 तत्वों का समन्वय परमावश्यक है-

(अ) विभिन्न प्रकार के खनिज और कणों एवं विभिन्न क्रम के रासायनिक संगटकों की उपस्थिति,

(ब) विभिन्न अजैविक लवणों का घोल,

(स) मिट्टियों में रन्ध्रता,

(द) विभिन्न क्रम के जैविक तत्वों का संघटन,

(इ) वनस्पति एवं जीव जन्तुआंे के सूक्ष्म अवयवों की उपलब्धि।

मिट्टी का वर्गीकरण:

अध्ययन क्षेत्र बालाघाट जिला की मिट्टी लगभग एक जैसी है। अंग्रेजी शासन काल में परम्परागत आधार पर भूमि का वर्गीकरण किया गया था। इस वर्गीकरण का मुख्य लक्ष्य भूमि की उत्पादकता एवं (सारणी क्रमांक 1.7) बनावट के आधार पर भूमि का लगान आना (पुराने सिक्के) का भाग निर्धारक का स्तर भिन्न-भिन्न था फिर भी मुख्य रूप से निम्न आधार है-

ब) उत्पादकता के आधार पर वर्गीकरण -

(क) उत्तम गुण की मिट्टी,

(ख) मध्यम किस्म की मिट्टी,

(ग) निम्न मिट्टी,

(घ) निम्न स्तर की मिट्टी।

(स) मिट्टी का स्थानीय वर्गीकरण -

(क) सिगमा

(ख) दोमट - मैर

(द) उपलब्ध आकड़ों के आधार पर वर्गीकरण: मध्यप्रदेश शासन भू-गर्भ शास्त्र और खनिज विभाग द्वारा प्रत्येक जिले हेतु तैयार किये गये विवरण के अनुसार इस भू-भाग की मिट्टी को निम्न वर्गो में विभक्त कर सकते हैं-

(1) कापयुक्त मिट्टी,

(2) काली मिट्टी,

(3) लाल मिट्टी,

(4) लाल और काली मिट्टी।

(1) कापयुक्त मिट्टी: अध्ययन क्षेत्र बालाघाट जिला के उत्तरी भाग में कापयुक्त मिट्टी पायी जाती है। यह बाढ़ द्वारा लायी हुई मिट्टी बैनगंगा के मैदान की मिट्टी का ही एक भाग है, जो भू-गर्भिक दृश्टि से नवीन हैं। सहायक नदियों के अपरदन के कारण इस मिट्टी में नाइट्रोजन, फासफोरस और पोटास अधिक मात्रा में पाया जाता है।

(2) काली मिट्टी: काली मिट्टी बालाघाट जिला में प्रायद्वीपीय भारत में हुये ज्वालामुखी निक्षेप के विस्तृत क्षेत्र से ढंका हुआ भू-भाग है। विशाल मैगनेसाइट के अंतिम विभाजन के कारण इस मिट्टी का रंग काला है। सूखे के समय काली मिट्टी सिकुड़ती है और दरार पड़ जाती है। काली मिट्टी में जब पानी पड़ता है तो वह चिकनी हो जाती है। इस मिट्टी में ज्वार, चना, गेहूँ और कपास पर्याप्त मात्रा में पैदा किया जाता है।

(3) लाल मिट्टी: इस मिट्टी की प्रमुख विशेशता हल्का लाल रंग है। लाल रंग मिट्टी का क्षेत्र इस घाटी में बिखरा हुआ पाया जाता है। इसकी उर्वरा शक्ति अन्य मिट्टियों की तुलना में कम है। यह मिट्टी प्रमुख रूप से बालाघाट जिला के उत्तरी-पूर्वी भाग में विकसित पायी जाती है। स्थानीय भिन्नता की दृश्टि से लाल मिट्टी को दो भागो में विभक्त कर सकते हैं-

(अ) पखुआ,

(ब) कंकड़ युक्त (रोकड़)।

(अ) पखुआ: पखुआ हल्की भूमि की मिट्टी है, जो कि बलुही मिट्टी से भिन्न होती है। खाद एवं सिंचाई के माध्यम से इस मिट्टी का निर्माण जलयुक्त आग्नेय चट्टान के क्षरण से हुआ है। यह मिट्टी नम होने पर लचीली हो जाती है। इसका रंग सामान्यतः नीला, हरा, लाल एवं पीला भूरा होता है।

(ब) कंकड़ युक्त (रोकड़): कंकड़ युक्त लाल मिट्टी ही वास्तव में रोकड़ मिट्टी है, जो कि उपज की दृश्टि से निरर्थक है। यह

www.ignited.in

अपरदित मिट्टी है। जिसमें अनुपजाऊ तत्व ही पाये जाते हैं। इसका रंग स्थान-स्थान पर बदलता रहता है। इस मिट्टी में कृशि अत्यधिक वर्शा पर ही सम्भव होती है। बालाघाट जिला के पूर्वी भाग जो सतपुड़ा श्रेणियों के उच्च भाग हैं, में इस प्रकार की मिट्टी पाई जाती है।

(4) लाल और काली मिट्टी: यह लाल एवं काली मिट्टी का मिश्रित रूप है, जिसमें लाल मिट्टी से अधिक किन्तु काली मिट्टी से कम उर्वरता पायी जाती है। इस मिट्टी में चूनाँश नहीं मिलते। इस मिट्टी में मक्का, ज्वार, चना, गेहूँ, अलसी आदि की फसल उगायी जाती है।

उपर्युक्त मिट्टियों के अतिरिक्त अध्ययन क्षेत्र के अनेक स्थानों में ऊसर एवं लेटराइट मिट्टी के निक्षेप भी दृश्टिगोचर होते हैं। इस प्रकार की मिट्टी वाले क्षेत्र बंजर एवं नग्न पाये जाते है।

स. मानवीय स्वरूप:

जनसंख्या:

मानव अपने सांस्कृतिक एवं प्राकृतिक आवरणों का उपयोग करता है, उससे प्रभावित होता है और उसमें परिवर्तन करता है। भूमि, मिट्टी खनिज पदार्थ, वनस्पति और जीव-जन्तुओं का उपयोग करते हुये, उत्पादन, खेती, पशुपालन, मत्स्य पालन, उद्योग, व्यापार और परिवहन जैसे सांस्कृतिक तत्वों का निर्माण करता है, जो सामाजिक संगठन, राजनीतिक प्रबंध और सांस्कृतिक विकास जैसे स्वरूपों के विकास में सहायक है। यह प्राकृतिक साधनों का उपयोग करके सांस्कृतिक परिवेश का निर्माण करता है।

जनसंख्या का अध्ययन आज विश्व के सभी भागों में विकास एवं सभी प्रकार के व्यवसायों तथा उद्योगों को समझने का माध्यम रहा है। अतः जनसंख्या के सभी पहलुओं, उनके प्रभाव, परिणाम एवं विशेषताओं का अध्ययन आवश्यक हो गया है। जनसंख्या का अध्ययन इस बात को जानने को उत्सुक होता है कि पृथ्वी के विभिन्न भागों में जनसंख्या का स्वरूप कैसा है? उसमें किस दर से वृद्धि या गिरावट हो रही है? विभिन्नताएँ क्या है? जनसंख्या का वितरण एवं घनत्व कैसा है? आयु वर्ग स्त्री-पुरूष का अनुपात कैसा है? शैक्षणिक कैसी है? किस दर से शिक्षा का विकास हो रहा है? इत्यादि बातों की जानकारी जनसंख्या के अध्ययन से ही संभव है।

जनसंख्या विकास:

अध्ययन क्षेत्र बालाघाट जिला का इतिहास क्रमिक नहीं रहा है। इस जिले में प्राचीन काल से ही जनसंख्या विकास के प्रमाण मिलते हैं। प्रमाणिक रूप से जनसंख्या वृद्धि संबंधी आंकड़े 1901 से उपलब्ध हुये हैं। विभिन्न दशकों में वृद्धि का स्वरूप अलग - अलग पाया जाता है। सारणी क्रमांक 2.8 से स्पष्ट हो जाता है कि सर्वाधिक जनसंख्या वृद्धि का दशक 1901 से 1911 (36.97) रहा। 1951 से 1961 में यह वृद्धि 14.04 प्रतिशत तथा 1961-71 में 17.50 प्रतिशत अंकित की गयी। 1991-2001 में यह वृद्धि 8.81 प्रतिशत अंकित की गयी। इन वर्षो में जनसंख्या वृद्धि का प्रमुख कारण आर्थिक विकास की दर में वृद्धि तथा राजनैतिक प्रक्रियायें रहीं।

सारणी क्रमांक

जनसंख्या का वितरण एवं घनत्व:

अध्ययन क्षेत्र बालाघाट जिला में जनसंख्या का वितरण एक समान नहीं पाया जाता है, क्योंकि इस भूभाग में धरातल, मिट्टी, जल की उपलब्धता में पर्याप्त अंतर पाया जाता है। सारणी क्रमांक 1.9 के अनुसार वारासिवनी, लालबर्रा, खैरलांजी, कटंगी, लांजी, किरनारपुर एवं बालाघाट विकासखण्ड में जनसंख्या का घनत्व उच्च पाया जाता है, जो बालाघाट जिले के जनसंख्या घनत्व 162 व्यक्ति प्रतिवर्ग कि.मी. से अधिक है। विरसा विकासखण्ड में जनसंख्या घनत्व न्यूनतम 93 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर पाया जाता है। सर्वाधिक घनत्व लालवर्रा विकासखण्ड में 317 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर पाया जाता है।

जनसंख्या घनत्व की दृश्टि से अध्ययन क्षेत्र को 3 उपवर्गो में विभक्त किया जा सकता है

1. उच्च घनत्व के क्षेत्र,

2. मध्यम घनत्व के क्षेत्र,

3. न्यून घनत्व के क्षेत्र।

1. उच्च घनत्व के क्षेत्र: इसके अन्तर्गत बालाघाट जिले की वारासिवनी एवं लालबर्रा विकासखण्ड शामिल है। यहाॅ जनसंख्या का घनत्व 300 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर से अधिक पाया जाता है।

2. मध्यम घनत्व के क्षेत्र: 150 से 300 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर जनसंख्या घनत्व वाले क्षेत्र इसके अन्तर्गत आते हैं। इसमें मुख्यतः खैरलांजी, कटंगी, किरनापुर, लांजी एवं बालाघाट विकासखण्ड आती हैं।

3. न्यून घनत्व के क्षेत्र: न्यून जन घनत्व के अनतर्गत बैहर, विरसा विकासखण्ड आते है। यहाॅ जनसंख्या का घनत्व 150 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर से कम पाया जाता है।

लिंगानुपात

2001 की जनगणना के अनुसार बालाघाट जिले में 49.45 प्रतिशत पुरूष तथा 50.54 प्रतिशत महिलायें, निवास कर रही हैं। अध्ययन क्षेत्र में स्थित सभी ग्यारह तहसीलों में लिंगानुपात में विविधता दृष्टिगोचर होती है, जैसा कि निम्नाकित सारणी क्रमांक 1.10 से स्पष्ट होता है -

सारणी क्रमांक

बालाघाट जिला में प्रति हजार पुरूषों पर महिलाओं की स्थिति - 2011

बालाघाट जिले में प्रति हजार पुरूषों पर 1021 महिलायें (सारणी क्रमांक 1.10) पायी जाती हैं। विरसा, बैहर, परसबाड़ा, कटंगी एवं खैरलांजी में प्रति हजार पुरूषों पर क्रमशः 1171, 1128, 1036, 1030 एवं 1027 महिलायें पायी जाती हैं, जो जिले के औसत से अधिक है। लांजी एवं तिरोड़ी तहसीलों में क्रमशः 1011 एवं 1016 महिलायें प्रति हजार पुरूषों पर पायी जाती हैं, जो जिले के औसत से कम हैं।

ग्रामीण एवं नगरीय जनसंख्या:

बालाघाट जिले में 87.05 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास कर रही है। इस क्षेत्र में मात्र 12.95 प्रतिशत व्यक्ति नगरों में निवास कर रहे हैं। इसी कारण बालाघाट जिला में नगरीकरण का विकास कम हो पाया है। बालाघाट जिले में ग्रामीण एवं नगरीय जनसंख्या निम्नानुसार (सारणी क्रमांक 1.11) है -

सारणी क्रमांक

बालाघाट जिला में ग्रामीण एवं नगरीय जनसंख्या - 2011

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि बालाघाट जिले की बालाघाट तहसील में नगरीय जनसंख्या सबसे अधिक 38.38 प्रतिशत पायी जाती है, जबकि बैहर तहसील का स्थान दूसरा है, जहा 16.26 प्रतिशत व्यक्ति नगरीय जीवन व्यतीय कर रहे हैं। किरनारपुर, लालबर्रा, खैरलांजी, एवं लांजी तहसीलों में नगरीय जनसंख्या का आभाव पाया जाता है। वारासिवनी एवं कटंगी तहसीलों में क्रमशः 15.68 एवं 14.2 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या पायी जाती है। न्यूनतम नगरी जनसंख्या वाली तहसील परसवाड़ा है, जहाँ तहसील की कुल जनसंख्या का 6.26 प्रतिशत भाग नगरीय जनसंख्या का पाया जाता है।

व्यवसायिक जनसंख्या:

किसी भू-भाग में जो जनसंख्या निवास करती है, कार्य के आधार पर उन्हें तीन उपवर्गो में विभाजित किया जा सकता है -

1. कार्य न करने वाली जनसंख्या (अकार्यशील जनसंख्या)

2. कार्यशील जनसंख्या

3. सीमांत कार्यशील जनसंख्या।

1. कार्य न करने वाली जनसंख्या (अकार्यशील जनसंख्या):

जनसंख्या का वह भाग जो उत्पादन संबंधी किसी भी प्रकार के कार्य में संलग्न नहीं है, उन्हे अकार्यशील जनसंख्या के अन्तर्गत रखा जाता है। बालाघाट जिला में निवास करने वाली जनसंख्या का 45.78 प्रतिशत (सारणी क्रमांक 1.12) अकार्यशील है। सर्वाधिक अकार्यशील जनसंख्या का प्रतिशत बालाघाट तहसील में हैं। यहाॅ समस्त जनसंख्या के 50.66 प्रतिशत भाग किसी भी उत्पादन संबंधी कार्य में संलग्न नहीं है, जबकि लालबर्रा तहसील में समग्र जनसंख्या का 43.24

www.ignited.in

प्रतिशत भाग अकार्यशील है, जो अध्ययन क्षेत्र में सबसे कम है।

सारणी क्रमांक 2.12 से पता चलता है कि कुल जनसंख्या में अकार्यशील जनसंख्या का एक बड़ा भाग महिलाओं का है जो 20.89 प्रतिशत पुरूषों की तुलना में 24.89 प्रतिशत है। सर्वाधिक अकार्यशील महिलाओं का 29.07 प्रतिशत बालाघाट तहसील में एवं सबसे कम 22.66 प्रतिशत किरनारपुर तहसील में मिलता है।

सारणी क्रमांक

तहसीलवार व्यवसायिक जनसंख्या का स्वरूप (प्रतिशत में) - 2011

2. कार्यशील जनसंख्या:

किसी भी प्रकार के उत्पादन कार्य में लगी जनसंख्या कार्यशील जनसंख्या कहलाती है। इस संवर्ग के अन्तर्गत सम्मिलित जनसंख्या पूरे वर्ष किसी न किसी उद्यम में लगी होती है।

बालाघाट जिला में कार्यशील जनसंख्या समस्त जनसंख्या के 45.38 प्रतिशत (सारणी क्रमांक 1.12) भाग है, जिसमें कार्यशील पुरूषों का प्रतिशत 24.64 एवं 20.74 प्रतिशत महिलायें हैं। खैरलांजी तहसील में सर्वाधिक कार्यशील जनसंख्या 50.93 पायी जाती है। यहॉं 26.42 पुरूष एवं 24.51 हिलाओं का है। सबसे कम कार्यशील जनसंख्या बालघाट तहसील में 36.72 है। समस्त कार्यशील जनसंख्या में पुरूषों का सर्वाधिक प्रतिशत खैरलांजी तहसील में तथा महिलाओं का 24.51 खैरलांजी तहसील में पाया जाता है, जबकि न्यूनतम कार्यशील पुरूषों का 22.67 एवं महिलाओं का क्रमशः 14.04 पाया जाता है।

3. सीमांत कार्यशील जनसंख्या:

जनसंख्या का वह भाग जो समय विशेष में उत्पादन कार्य से जुड़ जाता है, किन्तु वर्ष के अधिकांश समय में कार्य नहीं करता है, उन्हें सीमांत कार्यशील जनसंख्या के अन्तर्गत रखा जाता है।

बालाघाट जिला में सीमांत कार्यकर्ता कुल जनसंख्या के 6.17 प्रतिशत भाग हैं, जिनमें पुरूषों का प्रतिशत 0.32 एवं महिलाओं का 5.85 प्रतिशत है। निष्कर्षतः सीमांत कार्यकर्ता के रूप में महिलाओं की संख्या अधिक पायी जाती है। सारणी क्रमांक 1.12 की विवेचना से स्पष्ट होता है कि सीमांत कार्यकर्ताओं का सर्वाधिक भाग 8.86 प्रतिशत लालबर्रा तहसील में मिलता है, जबकि न्यूनतम 3.25 प्रतिशत बालाघाट तहसील में पाया जाता है। कुल जनसंख्या में पुरूष सीमांत कार्यकर्ता लालबर्रा तहसील में सबसे अधिक 0.57 तथा सबसे कम 0.14 बालाघाट तहसील में मिलता है, जबकि सर्वाधिक महिलाओं का 8.29 लालबर्रा तहसील में तथा न्यूनतम 3.10बालाघाट तहसील में पाया जाता है।

कार्यशील जनसंख्या का व्यावसायिक स्वरूप

उद्यमों के अनुसार कार्यशील जनसंख्या को वर्ष 2001 की जनगणना में 4 वर्गों में रखा गया है -

1. कृषक

2. कृषि मजदूर

3. कुटीर एवं लघु उद्योग

4. अन्य उद्यम।

अध्ययन क्षेत्र में विभिन्न उद्यमों में लगे हुये लोगों का विवरण सारणी क्रमांक 1.13 में प्रदर्शित किया गया है। जिससे स्पष्ट होता है कि इस भू-भाग में कृषक एवं कृषि मजदूरों का प्रतिशत सबसे अधिक है। इस क्षेत्र में 53.88 प्रतिशत कृषक एवं 23.76 प्रतिशत कृषि मजदूर हैं, जो कार्यशील जनसंख्या के 77.64 प्रतिशत भाग हैं। उद्योग-धन्धों में लगी हुई जनसंख्या का प्रतिशत 12.71 प्रतिशत तथा उद्योगों के अतिरिक्त अन्य कार्यों में लगी हुई जनसंख्या का प्रतिशत न्यूनतम 4.29 प्रतिशत है।

1. कृषक:

बालाघाट जिला के लोगों का मुख्य उद्यम कृषि है। कृषि कार्य में कृषक एवं कृषि मजदूर सम्मिलित रूप से कार्य करते हैं। समस्त कार्यशील जनसंख्या के 53.88 प्रतिशत कृषक हैं। कृषकों के इस प्रतिशत में क्षेत्रीय विषमता दृष्टिगोचर होती है। लांजी तहसील में सर्वाधिक 50.80 प्रतिशत कृषक जनसंख्या है, जबकि बालाघाट तहसील में सबसे कम 35.25 प्रतिशत कृषक हैं।

2. कृषि मजदूर:

कृषि मजदूर के अन्तर्गत कार्यशील जनसंख्या का वह भाग शामिल होता है जो खेतों पर कार्य करते हैं, किन्तु वे खेत कार्य करने वालों के नहीं होते, इन्हें कृषि मजदूर कहा जाता है। बालाघाट जिला में कृषि मजदूर समस्त कार्यशील जनसंख्या के 23.76 प्रतिशत भाग है। लांजी तहसील में समस्त कार्यशील जनसंख्या के 26.34 प्रतिशत कृषि मजदूर हैं, जो अधिकतम है, जबकि सबसे कम 20.25 प्रतिशत कृषि मजदूर बैहर तहसील में पाये जाते हैं।

सारणी क्रमांक

बालाघाट जिला में विभिन्न उद्यमों में लगी जनसंख्या

3. उद्योग:

इस क्षेत्र में उद्योगों में लगी जनसंख्या समस्त कार्यशील जनसंख्या के 12.71 प्रतिशत है। वारासिवनी तहसील में उद्योगों में लगी हुयी जनसंख्या कुल कार्यशील जनसंख्या के 37.12 प्रतिशत है, जो सबसे अधिक है। बैहर तहसील में सबसे कम 8.64 प्रतिशत जनसंख्या उद्योगों में संलग्न है। किरनापुर, लालबर्रा एवं खैरलांजी तहसीलों में कार्यशील जनसंख्या का कोई भाग उद्योगो में संलग्न नहीं है।

4. अन्य उद्यम:

कृषि, कृषि मजदूर एवं उद्योगों में लगी जनसंख्या के अतिरिक्त इस वर्ग में सम्मिलित है, जो कुल कार्यशील जनसंख्या के 4.29 प्रतिशत है। वरीयता क्रम में यह संवर्ग चतुर्थ स्थान पर है। क्षेत्रीय विषमता इस वर्ग में भी दृष्टिगोचर होती है। इस संवर्ग में समस्त कार्यशील जनसंख्या के 9.98 प्रतिशत बालाघाट तहसील में पाया जाता है, जो कि जिले में अधिकतम है तथा 2.68 प्रतिशत किरनापुर तहसील में न्यूनतम है।

जातिगत जनसंख्याः

भारतीय जनगणना निदेशालय द्वारा अध्ययन क्षेत्र में निवास करने वाली जनसंख्या को निम्नांकित तीन वर्गो में विभक्त किया गया है -

1. सामान्य जाति,

2. अनुसूचित जाति,

3. अनुसूचित जनजाति।

1. सामान्य जाति:

बालाघाट जिला में सामान्य जाति की संख्या कुल जनसंख्या के 70.47 प्रतिशत है। जिले की किरनापुर तहसील में कुल जनसंख्या के 83.60 प्रतिशत सामान्य जाति के लोग निवास करते हैं, जो अध्ययन क्षेत्र में सर्वाधिक है। जबकि बैहर तहसील में 42.69 प्रतिशत सामान्य जाति के लोग निवास कर रहे हैं, जो की सबसे कम हैं।

2. अनुसूचित जाति:

इस जिला में कुल जनसंख्या का 7.37 प्रतिशत भाग अनुसूचित जाति जनसंख्या का है। अध्ययन क्षेत्र की सभी तहसीलों में इसका प्रतिशत एक समान नहीं पाया जाता है। जिले की वारासिवनी तहसील में अनुसूचित जाति का प्रतिशत 11.07 है, जो अन्य तहसीलों की अपेक्षा अधिक है। जबकि बैहर तहसील में इनका प्रतिशत सबसे कम 3.60 प्रतिशत है।

सारणी क्रमांक

बालाघाट जिला में जातिगत जनसंख्या, 2011

3. अनुसूचित जनजाति:

बालाघाट जिला में अनुसूचित जनजाति के 22.50 प्रतिशत लोग निवास कर रहे हैं। जिले की बैहर तहसील में सबसे अधिक 55.81 प्रतिशत अनुसूचित

जनजाति की जनसंख्या पायी जाती है। तथा किरनापुर तहसील में 7.84 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति के लोग निवास कर रहे हैं, जो कि अध्ययन क्षेत्र में न्यूनतम है।

धर्मानुसार जनसंख्या:

बालाघाट जिला में विभिन्न धर्मावलम्बी जनसंख्या पायी जाती है, जिसमें हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई एवं जैन प्रमुख है। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार विभिन्न धर्म मानने वाले लोगों की जनसंख्या एवं उनका प्रतिशत निम्नानुसार है

www.ignited.in

सारणी क्रमांक

बालाघाट जिला में धर्मानुसार जनसंख्या वर्ष 2011

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि बालाघाट जिला में हिन्दू धर्मावलम्बी जनसंख्या सर्वाधिक है। हिन्दुओं की जनसंख्या कुल जनसंख्या के 93.12 प्रतिशत है। दूसरे क्रम पर अन्य धर्मावलम्बी लोग हैं जो कुल जनसंख्या के 2.27 प्रतिशत है। मुसलमानों की संख्या कुल जनसंख्या के 2.25 प्रतिशत पायी जाती है।

आर्थिक स्वरूप - भूमि उपयोग:

भूमि उपयोग का अध्ययन भूगोलविदों, अर्थशास्त्रियों और समाजशास्त्रियों के लिये समान रूप से उपयोगी है, क्योंकि भूमि उपयोग का प्रारूप तीन प्रधान कारकों से प्रभावित होता है -

1. भौतिक कारक,

2. आर्थिक कारक,

3. संस्थागत कारक।

अध्ययन क्षेत्र बालाघाट जिला में भूमि का स्वरूप, मृदा की विशेषता, जल प्रप्ति, निवास करने वाली जनसंख्या के सामाजिक-आर्थिक स्तर और भूमि संसाधनों पर जनसंख्या का दबाव ऐसे प्रधान कारक हैं, जिन्होने भूमि उपयोग प्रारूप को प्रधान रूप से प्रभावित किया है। इनमें से जल प्राप्ति की स्थिति का प्रधान महत्व है, किन्तु इस क्षेत्र की मृदा की विशेषता भी भूमि उपयोग प्रारूप को प्रभावित करने वाला महत्वपूर्ण कारक है।

मानव द्वारा भूमि का उपयोग विभिन्न स्वरूप यथा - आवास, कृषि, पशुपालन, खनन, आवागवन के साधनों का विकास, जल संचयन हेतु तालाब एवं बांध का निर्माण आदि कार्यो, में किया जाता है। भोजन, वस्त्र एवं आवास आवश्यक आवश्यकता होती है, जिसके लिये अति प्राचीन काल से मानव भूमि में कृषि कार्य करता आ रहा है। प्रारंभ में जनसंख्या के कम होने से केवल उŸाम भूमि जोती जाती थी, किन्तु जनसंख्या के वृद्धि के कारण निम्न कोटि की भूमि को उपयोग में लिया गया। फलतः कृषि के अन्तर्गत भूमि क्षेत्र में निरंतर वृद्धि होती गयी।

भूमि उपयोग को प्रभावित करने वाले तत्व

1. भौतिक तत्व:

भौतिक तत्व भूमि उपयोग को एक निश्चित दिशा देने में काफी महत्वपूर्ण होते हैं। भूमि उपयोग की सीमा, कृषि प्रकार एवं अन्य कृषि की जटिलताएं भौतिक दशाओं के विभिन्न रूपों में निर्धारित होती हैं।

किसी भी क्षेत्र में कृषि का विकास वहा के प्राकृतिक वातावरण और भौतिक पर्यावरण पर निर्भर करता है। कृषि की दशाएं प्रधान रूप से भौतिक पर्यावरण के अन्तर्गत ही जन्म लेती हैं। भौतिक वातावरण के अन्तर्गत जलवायु, वर्षा, तापमान, पानी, भूमि, मृदा, प्राकृतिक वनस्पति आदि को सम्मिलित किया जाता है, जो भूमि उपयोग को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से प्रभावित करते हैं।

2. आर्थिक कारक:

भौतिक तत्वों के समान आर्थिक तत्व भी किसी क्षेत्र के भूमि उपयोग को प्रभावित करते हैं। किसी क्षेत्र के भूमि उपयोग का प्रारूप वहा की भूमि व्यवस्थाओं पर निर्भर होता है तथा उनका प्रभाव कृषि द्वारा उत्पादित वस्तुओं पर पड़ता है। इसके विपरीत कृषकों की आर्थिक स्थिति एवं अपर्याप्त पूंजी आदि का प्रभाव भी भूमि उपयोग पर पड़ता है। इन सबके अभाव में अच्छी किस्म के बीज, खाद, उपकरण, औजार आदि की सुव्यवस्था नहीं हो पाती। जिसके कारण कृषि का विकास नहीं हो पाता।

3. संस्थागत कारक:

विभिन्न सामाजिक व्यवस्थाओं को जिनमें धार्मिक समाज, रीति-रिवाज, मानव समूह के जातिगत गुण, आदिम जातियों के तौर-तरीकों के अलावा प्रमुख रूप से काश्तकारी, खेतों का आकार, भूमि स्वामित्व जैसे तथ्यों को अनेक परिप्रेक्ष्य में देखा जा सकता है। क्योंकि विभिन्न सामाजिक समूहों की अपनी अलग व्यवस्थायें होती हैं तथा इन्ही के परिप्रेक्ष्य में कृषि की जाती है।

बालाघाट जिला में भूमि उपयोग का स्वरूप:-

अध्ययन की सुविधा के आधार पर भूमि उपयोग निम्नलिखित वर्गों में विभक्त किया जा सकता है -

1. वन,

2. कृषि के लिये अनुपलब्ध भूमि,

3. पड़ती भूमि,

4. कृषि योग्य भूमि,

5. दो फसली क्षेत्र,

6. सिंचित क्षेत्र।

1. वन:

भूमि उपयोग के निर्धारण में वनों का महत्वपूर्ण स्थान है। वन भूमि की उर्वरता एवं संरक्षण के लिये अत्यन्त आवश्यक हैं। अध्ययन क्षेत्र बालाघाट जिला में वन भूमि का प्रतिवेदित क्षेत्रफल 504804 हेक्टेयर है, जो अध्ययन क्षेत्र के कुल भूमि का 54.60 प्रतिशत भाग है। अध्ययन क्षेत्र में वनों के वितरण में काफी विषमता दृष्टिगोचर होती है। जिले की बैहर तहसील में सर्वाधिक 66.29 प्रतिशत भाग वनाच्छादित है। बालाघाट, लांजी, किरनापुर, लालबर्रा, कटंगी, वारासिवनी तहसीलों में क्रमशः 65.23, 56.93, 48.33, 42.43, 38.46 एवं 17.58 प्रतिशत भाग में वन पाये जाते हैं। जिले की खैरलांजी तहसील में वनों का क्षेत्रफल 16.29 प्रतिशत है, जो अध्ययन क्षेत्र में सबसे कम है।

2. कृषि के लिये अनुपलब्ध भूमि:

बालाघाट जिला में 57033 हेक्टेयर भूमि कृषि के लिये अनुपलब्ध है, जो कुल क्षेत्रफल का 6.16 प्रतिशत है। वितरण के आधार पर जिले की वारासिवनी तहसील में 10.08 प्रतिशत भूमि कृषि के लिये अनुपलब्ध है, जो जिले में सर्वाधिक है तथा बैहर तहसील में कृषि के लिये अनुपलब्ध भूमि का प्रतिशत 5.05 है, जो सबसे कम भाग है।

3. पड़ती भूमि:

ऐसी भूमि जिसमें पिछले कई वर्षो से कृषि कार्य न किया गया हो, पड़ती भूमि कहलाती है। पड़ती भूमि में नई व पुरानी पड़ती सम्मिलित होती है। अध्ययन क्षेत्र में 29663 हेक्टेयर भूमि पड़ती है, जो कुल क्षेत्रफल का 3.20 प्रतिशत है। वितरण की दृष्टि से जिले की खैरलांजी तहसील में 7.20 प्रतिशत भूमि पड़ती है, जो अध्ययन क्षेत्र में सर्वाधिक है तथा लांजी तहसील में पड़ती भूमि का प्रतिशत 1.53 है, जो अध्ययन क्षेत्र में सबसे कम है।

4. कृषि योग्य भूमि:

बालाघाट जिला में कृषि योग्य भूमि 272816 हेक्टेयर है, जो कुल क्षेत्रफल का 29.50 प्रतिशत है। अध्ययन क्षेत्र की वारासिवनी तहसील में 58.31 प्रतिशत भूमि कृषि योग्य है, जो सबसे अधिक है। जिले की बैहर तहसील में कृषि योग्य भूमि का प्रतिशत 19.25 है, जो अध्ययन क्षेत्र में सबसे कम है।

5. दो फसली क्षेत्र:

दो फसली क्षेत्र भूमि उपयोग प्रारूप के अन्तर्गत विशेष महत्वपूर्ण माना जाता है। दो फसली क्षेत्र का अनुपात किसी क्षेत्र विशेष के कृषि विकास को व्यक्त करता है। बालाघाट जिला में 69552 हेक्टेयर भूमि दो फसली क्षेत्र के अंतर्गत आती हैं, जो कुल कृषि योग्य भूमि का 25.49 प्रतिशत है। दो फसली क्षेत्र का सर्वाधिक प्रतिशत लांजी तहसील में 42.46 प्रतिशत है तथा सबसे कम बैहर तहसील में 9.20 प्रतिशत है।

6. सिंचित क्षेत्र:

बालाघाट जिला की 124019 हेक्टेयर भूमि सिंचित है। जो कुल क्षेत्रफल का 45.45 प्रतिशत है। सिंचित क्षेत्र का सर्वाधिक प्रतिशत लालबर्रा तहसील में 82.48 प्रतिशत है एवं न्यूनतम 10.91 प्रतिशत बैहर तहसील में मिलता है।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि बालाघाट जिला भूमि उपयोग की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण कृषि क्षेत्र है।

कृषि:

कृषि मानव समुदाय के अर्थव्यवस्था की पुरानी परंपरा है और इसका विस्तार उतना ही पुराना है जितना मानव निवास। कृषि मनुष्य का प्राचीन व्यवसाय है यद्यपि इसका ढंग और इसकी पद्धतियाॅं समय-समय पर बदलती रही हैं। उपयोगिता की दृष्टि से कृषि मानव को खाद्य, वस्तु तथा गृह निर्माण का

साधनों मात्र ही नहीं प्रदान करती अपितु यह आवासीय विकास, उद्योग और व्यापार का भी द्योतक है।

अध्ययन क्षेत्र बालाघाट जिला कृषि प्रधान जिला है। यहाँ निवास करने वाली जनसंख्या के लगभग 78 प्रतिशत लोग कृषि पर प्रत्यक्षतः निर्भर हैं। भूमि उपयोग (सारणी क्रमांक 1.16) के आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र के

समस्त क्षेत्रफल का 29.59 प्रतिशत भू-भाग कृषि के अन्तर्गत प्रयुक्त किया जाता है।

शस्य प्रतिरूप:-

अध्ययन क्षेत्र में पैदा की जाने वाली फसलों में पर्याप्त विभिन्नता पायी जाती है। विभिन्नता का प्रमुख कारण भूमि की बनावट एवं मृदा का एक समान न होना है। इस जिला में कृषि का स्वरूप जीवन निर्वाहक है।

फसलों को उगने की अवधि के अनुसार पैदा की जाने वाली फसलों को दो मुख्य भागों में विभाजित किया जा सकता है -

1. खरीफ फसलें।

2. रबी फसलें।

1. **खरीफ फसलें:**

खरीफ फसलों की बुवाई का कार्य मध्य जून से जुलाई तक पूरा कर लिया जाता है। जो नवम्बर माह तक पककर तैयार हो जाती है। खरीफ फसलें जो इस क्षेत्र में पैदा की जाती हैं उनमें चावल प्रथम कोटि की फसल है। संपूर्ण कृषि फसलों में खरीफ फसलें 79.10 प्रतिशत भाग में पैदा की जाती हैं।

अध्ययन क्षेत्र में खरीफ फसलों के अन्तर्गत सम्मिलित क्षेत्र में भिन्नता पाई जाती है। बैहर तहसील में इसके अंतर्गत सम्मिलित क्षेत्रफल कुल कृषित क्षेत्र का 91.52 प्रतिशत है, जबकि लांजी तहसील के कुल क्षेत्र से खरीफ फसलों का क्षेत्र 69.96 प्रतिशत (सारणी क्रमांक 1.17) है।

2. रबी फसलें:

रबी फसलों की बुवाई मध्य अक्टूबर से 15 दिसम्बर तक होती है तथा मार्च तक पक कर तैयार हो जाती है। सारणी क्रमांक 2.17 के अनुसार निराफसली क्षेत्र के 20.90 प्रतिशत क्षेत्र में रबी फसलें, बोई जाती हैं। इस प्रकार खरीफ फसलों की तुलना में 58.2 प्रतिशत रबी फसलों का क्षेत्र कम है। रबी फसल की पैदावार जिले में सबसे अधिक 30.04 प्रतिशत लांजी तहसील में तथा सबसे कम 8.48 प्रतिशत बैहर तहसील में है। 46

दलहन फसलें

बालाघाट जिला में दलहन फसलों की पैदावार खरीफ एवं रबी दोनों फसलों के अंतर्गत किया जाता है। चना इस प्रदेश की प्रमुख दलहन फसल है। समस्त दलहन फसलों का उत्पादन 31997 हेक्टेयर क्षेत्र में किया जाता है, जो निराफसली क्षेत्र का 9.35 प्रतिशत भू-भाग है।

उपर्युक्त सारणी क्रमांक के अनुसार बालाघाट जिला में समस्त दलहन क्षेत्रफल में अन्य दाले 75.72 प्रतिशत, चना 22.21 प्रतिशत एवं मटर 2.05 प्रतिशत भू-भाग पर पैदा की जाती हैं।

तिलहन फसलें:-

बालाघाट जिला की प्रमुख तिलहन फसलों में तिल, सरसों एवं सोयाबीन है। जिनका उत्पादन 22433 हेक्टेयर क्षेत्र में किया जाता है, जो समस्त निराफसली क्षेत्र का 8.22 भाग है। सरसों बालाघाट जिला के तिलहन फसली क्षेत्र के 15.64 एवं तिल 4.93 क्षेत्र में पैदा की जाती है।

सारणी क्रमांक

बालाघाट जिला में तिलहन फसलों के अंतर्गत

कृषि पद्धतिया:-

कृषि विकास में कृषि पद्धतियों का अत्याधिक महत्व है। कृषि पद्धतियों के माध्यम से प्रमुख फसलों में गुणात्मक वृद्धि होती है। कृषि पद्धति के अन्तर्गत कृषि की वृद्धि में उन्नत बीज एवं खाद का महत्व, कीटनाशक दवाओं का प्रयोग, अधिकाधिक सिंचाई का प्रयोग एवं गहन खेती का विकास

आदि तथ्य आते हैं। इस क्षेत्र में निम्नलिखित कृषि पद्धतियों का प्रयोग प्रचिलित पाया जाता है -

1. छिटका पद्धति,

2. रोपा पद्धति,

3. नारी बुवाई पद्धति,

4. फसल चक्र पद्धति।

मुख्य रूप से छिटका तथा रोपा पद्धति का प्रयोग धान की फसल के लिये किया जाता है, तथा नारी बुवाई पद्धति का प्रयोग गेंहू, चना आदि फसलों में होता है। भूमि की उर्वरा शक्ति बनाये रखने के लिये फसल चक्र पद्धति का प्रयोग किया जाता है।

निष्कर्षतः जनसंख्या वृद्धि के साथ निरंतर कृषित क्षेत्र, कृषि तकनीकों, उर्वरकों आदि के प्रयोग में वृद्धि हो रही है। वर्तमान समय में कृषि का स्वरूप जीवन निर्वाह मूलक से व्यावसायिक स्वरूप में परिवर्तित होता जा रहा है।

जीव-जंतुः-

जीव जन्तुओं की दृष्टि से बालाघाट जिला काफी संपन्न रहा है। जिले का भाग वन्य पशुओं की दृष्टि से काफी सम्पन्न है। बालाघाट जिले का अधिकांश भाग वन्य पशुओं के लिये संरक्षित कर दिया गया है। यहॉ शेर, जंगली भैंस, चीता, सांभर, चीतल, भेड़िया, जंगली सुअर, नील गाय आदि कई अन्य जीव पाये जाते हैं।

पशुधनः-

पशुधन इस प्रदेश की अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण अंग है। बालाघाट जैसे कृषि प्रधान भू-भाग में पशुओं का कृषि कार्य में काफी योगदान है। खेतों की जुताई, बुवाई यहॉ तक कि भार वाहक के रूप में भी इनका उपयोग किया जाता है। साथ ही दूध, घी, मांस आदि के लिये भी पशुओं पर आश्रित रहना पड़ता है।

बालाघाट जिला में पशुओं का वितरणः-

बालाघाट जिला में पाये जाने वाले पशुओं में गोवंशीय पशुओं की संख्या सर्वाधिक है। इसके अतिरिक्त भैंस, बकरी, घोड़ा, सुअर आदि प्रमुख पशु पाये जाते हैं।

गौवंशीय पशुः-

अध्ययन क्षेत्र में गौ वंशीय पशु समस्त पशुओं के 60.00 हैं। जिले में स्थित सभी 11 तहसीलों में गौवंशीय पशु प्रथम कोटि के पशु हैं। सारणी क्रमांक 2.20 के अनुसार सर्वाधिक गौवंशीय पशु बैहर तहसील में 149570 हैं। जो समस्त जिले का 27.22 हैं। जबकि खैरलंजी तहसील में इनकी संख्या 52735 है, जो समस्त का 9.59 है, न्यूनतम है। अध्ययन क्षेत्र में गौवंशीय पशुओं की अधिकता का मुख्य कारण दूध, घी, जैसे पौष्टिक आहारों की पूर्ति तथा क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था में कृषि हेतु निर्भर रहना है।

भैंस वंशीयः-

भैंस सर्वाधिक दूध देने वाली पशु है। अध्ययन क्षेत्र में इनकी संख्या 142795 है, जो समस्त पशुओं का 15.59 प्रतिशत है। वैहर तहसील में भैंसों की संख्या 37916 है, जो जिले में कुल भैंसों का 26.55 प्रतिशत है। जिले की लांजी तहसील एक ऐसा क्षेत्र है जहा पर भैंसों की संख्या 12570 है, जो समस्त तहसीलों की भैंसों का 8.80 प्रतिशत क्षेत्र में सबसे कम है। अध्ययन क्षेत्र में भैंसों से दूध, घी, दही पनीर जैसे पौष्टिक आहार की पूर्ति होती है।

बकरीः

बालाघाट जिला में बकरी पालने का मुख्य उद्देश्य दूघ एवं मांस प्राप्त करना है। जिले में इनकी कुल संख्या 200982 है, जो सामस्त पशुओं में 21.95 प्रतिशत है। जिले की वारासिवनी तहसील में बकरियों की संख्या सर्वाधिक 30300 है, जो अध्ययन क्षेत्र में समस्त बकरियों का 15.07 प्रतिशत है। जिले की खैरलांजी तहसील में बकरियों की कुल संख्या 20730 है, जो समस्त बकरियों का 10.31 प्रतिशत है, क्षेत्र में सबसे कम है।

सुअरः

यह मांस एवं रोंया प्रदान करने वाला पशु है। अध्ययन क्षेत्र में इन्हें अनुसूचित जाति के डोमार व कुम्हार लोग पालते हैं। जिले में इनकी संख्या 221773 है, जो समस्त पशुधन का 2.42 प्रतिशत है। वितरण की दृष्टि से जिले की बैहर तहसील में इनकी संख्या 12742 है, जो अध्ययन क्षेत्र के समस्त पशुधन का 57.46 प्रतिशत है, सर्वाधिक है। जबकि खैरलांजी तहसील

www.ignited.in

में इनकी संख्या 627 है, जो जिले के सुअरों का 2.82 प्रतिशत है सबसे कम है।

परिवहन:

किसी प्रदेश के विकास में आवागमन के साधनों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इन्हीं साधनों द्वारा प्रदेश की गतिशीलता एवं पहुॅंच के स्वरूप का निर्धारण होता है, जो एक क्षेत्र के अतिरिक्त उत्पादक को दूसरे क्षेत्र में तथा उस क्षेत्र के आवश्यकता की वस्तुएं अन्य प्रदेशों से लाकर लोगों के आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं।

यातायात मार्ग के रूप में रेल मार्ग एवं सड़क मार्ग बालाघाट जिला में उपलब्ध है। औद्योगिक विकास न होने का एक प्रमुख कारण इस क्षेत्र में यातायात का अभाव है।

1. **रेल मार्ग:**

अध्ययन क्षेत्र बालाघाट जिला दक्षिण-पूर्वी रेलवे के जबलपुर-गोंदिया रेलमार्ग पर स्थित है। यह रेल लाईन सकरी (नैरों गैज) है। तथा दूसरी रेल लाईन कटंगी से बालाघाट होते हुये गोंदिया तक जाती है। तिरोड़ी से तुमसर तक एक बड़ी लाईन (ब्राड गैज) का निर्माण रेलवे विभाग द्वारा किया गया है। इसके अतिरिक्त बालाघाट से भरवेली तथा वारासिवनी से रमरमा तक रेल यातायात की सुविधा उपलब्ध है। जिसके माध्यम से मैग्नीज खदानों से निकलने वाले मैग्नीज का देश के अन्य भागों में निर्यात किया जाता है।

2. **सड़क मार्ग:**

सड़क मार्गो का महत्व क्षेत्र के विकास में अधिक है, जो गांव को तहसील एवं जिला मुख्यालय से जोड़कर विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाहन करता है।

सड़क मार्ग अध्ययन क्षेत्र में आवागमन का महत्वपूर्ण साधन है। जिले के सभी विकासखण्ड एवं तहसीलें पक्की सड़क द्वारा आपस में जुड़े हुये हैं। बालाघाट जिले के सभी प्रमुख नगरों तथा कस्बों यथा-वारासिवनी, कटंगी, खैरलांजी, लालबर्रा, लांजी, बैहर तक पक्की सड़के बनी हुई हैं। वन विभाग द्वारा भी सड़कों का निर्माण किया गया है। बालाघाट जिला मध्यप्रदेश के अनेक प्रमुख नगरों जैसे- सिवनी, जबलपुर, सागर, नरसिंहपुर, मंडला, इटारसी, भोपाल आदि से तथा महाराष्ट्र के निकटवर्ती नगरों यथा-गोंदिया, तुमसर, भण्डारा, एवं नागपुर से सड़क मार्ग द्वारा जुड़ा हुआ है। बालाघाट जिला में सड़कों के विकास का स्वरूप निम्नानुसार (सारणी क्रमांक 1.22) पाया जाता है

उपर्युक्त सारणी क्रमांक 2.22 से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में सड़क मार्गो के विकास के लिये निरंतर कार्य किया जा रहा है। वर्ष 2005-06 में सड़कों की कुल लम्बाई 4076.80 कि.मी. थी, जो वर्ष 2002-10 में 4400.69 कि.मी. हो गई है। अर्थात् चार वर्षों के अन्तराल में 323.80 किलोमीटर सड़क मार्ग का विकास किया गया। वर्तमान में जिले में 1820.52 कि.मी. कच्ची सड़कें तथा 2580.17 कि.मी. पक्की सड़कें स्थित पायी जाती हैं।

उद्योग:

आधुनिक औद्योगिक विकास का प्रारंभ 19वीं सदी के मध्य औद्योगिक क्रांति से शुरू हुआ है। इसके साथ नये अनुसंधान और विकास से तकनीकी क्रांति का एक क्रम शुरू हुआ, जिसने वस्तु निर्माण, यातायात, नगरीकरण, पशुपालन और मानव की जीवन पद्धति को नया रूप प्रदान किया।

औद्योगिक दृष्टि से बालाघाट जिले के ग्रामीण अंचल अत्याधिक पिछड़े हुये हैं। उपयुक्त परिवहन के साधनों की कमी, साहसी एवं पूंजी निवेश की कमी के कारण जिले में बृहद उद्योगों की स्थापना नहीं हो सकी है। यहॉ वन, खनिज, कृषि एवं पशुओं पर आधारित लघु एवं कुटीर उद्योगों की इकाइया संचालित की जा रही हैं।

व्यापार:

वर्तमान आर्थिक परिवेश में लोगों की निर्भरता दूसरों पर बढ़ गई है। जिसका समाधान व्यापारिक प्रक्रियाओं द्वारा संपादित होता है। व्यापार क्षेत्रीय, प्रादेशिक, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय कोटि के होते हैं, जिसका संपादन आयात एवं निर्यात प्रक्रियाओं द्वारा किया जाता है।

आयात: बालाघाट जिला आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ भू-भाग है, जहाँ प्राथमिक आर्थिक क्रियाए अर्थव्यवस्था का मुख्य

आधार हैं। कार्यक्षमता एवं अधिकाधिक उत्पादन बढ़ाने के लिये इस जिले को दूसरे क्षेत्रों पर निर्भर रहना पड़ता है। मुख्य रूप से यह क्षेत्र दूसरे क्षेत्रों से दवाइयां, कपड़ा, किराना, लोहे के सामान, डीजल एवं पेट्रोल, मोटर पार्टस, चावल, इलेक्ट्रानिक वस्तुए, चमड़े की वस्तुएं, प्रसाधन का सामान आदि का प्रमुख रूप से आयात करता है।

निर्यात्: अध्ययन क्षेत्र में अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार वन, कृषि पशु एवं खनिज हैं। अतः इनसे संबंधित वस्तुए बालाघाट जिले से प्रादेशिक एवं राष्ट्रीय स्तर पर निर्यात की जाती हैं। प्रमुख वस्तुओं में बांस, इमारती लकड़ी, फर्नीचर, लकड़ी के खिलौने एवं खनिज उत्पादों का निर्यात किया जाता है। आयात-निर्यात की प्रक्रिया को सम्पादित करने वाला प्रथम कोटि का स्थल बालाघाट नगर है एवं द्वितीय कोटि के स्थल वारासिवनी, खैरलांजी, कटंगी, लांजी तथा बैहर हैं।

Corresponding Author

कल्पना बिसेन*

शोधार्थी, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, डोंगरिया, बालाघाट